पूजा-पाठ मीमांसा

लेखक

आचार्य डॉ. रामाधार उपाध्याय

प्रकाशक : रामकृपालु शर्मा (वेदाचार्य)

पूजा-पाठ मीमांसा

लेखक :

आचार्य डॉ. रामाधार उपाध्याय

विद्या वाचस्पति एम. ए., (पी. एच. डी., संस्कृत)

प्रकाशक :

पं. रामकृपालु शर्मा (वेदाचार्य)

17, रामायणम्, श्रीराम कुंज, श्रीराम कॉलोनी

होशंगाबाद रोड, भोपाल (मध्यप्रदेश)

मोबा. : 09826787902

9826962956

प्राक्कथन

वैदिक वाङ्मय ही हमारे संपूर्ण कार्यों के सम्पादन का सम्पूर्ण संविधान है। सोने से लेकर जागरण पर्यन्त, जीवन से मरण पर्यन्त की संपूर्ण गतिविधियों का प्रमाण हमारी सुविधा, हमारा मन तथा हमारी व्यवस्था नहीं। शास्त्र ही परम प्रमाण है। शास्त्रीय कर्मों में विरत हमारा जीवन पशु तुल्य ही नहीं उससे भी निम्न हो जायेगा। एतावता शास्त्र-वेद प्रमाणित कार्य ही हमारे लोक परलोक के सुख-शान्ति के परम कारण है।

यः+शास्त्र विधिमृत्सृज्य वर्तते कामकारतः।

न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम।। (गीता)

वैदिक मानवीय दैनन्दिन में देवार्चा का अत्यन्त महत्त्व रखा गया है। विना देवार्चन-जप-अतिथि तथा वलिवैश्य और गो ग्रास के भोजन को रक्त-मांस-पूय की संज्ञा दी गई है। राम चरित मानस के अवधवासी इस क्रम में सन्नद्ध हैं

करि मज्जन पूजहिं नरनारी। गणप गौरि त्रिपुरारि तमारी।।

रमा रमन पद बंदि बहोरी। विनवहिं अंजलि अंचल जोरी।।

उन तथाकथित अज्ञ-अनभिज्ञ-अशास्त्र-अवैदिक तथा मन्मुखी जनों की कुत्सित-कल्पना प्रसूत तथ्यों से आज हमारा समाज देवपूजा से बहिर्मुख हो रहा है। अत्यन्त चिन्तनीय बिन्दु है कि संपदा-सौविध्योन्मत्त संतति इस ओर विचार ही नहीं कर रहे हैं। माता-पिता भी उनकी प्रचुर संपत्ति प्राप्ति में स्वयं को कृतकार्य और धन्यधन्य मान रहे हैं। उनको देव-पितृ कार्यों की चिन्ता ही नहीं है। वेद भगवान कहते हैं

संस्काराभावे गुरुत्वात् पतनम् (वैशेषिक दर्शन)

इन संस्कारों के राहित्य में उभयवर्ती पतन है

द्वितीयतः ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो, यज्ञेन देवेभ्यः, प्रजया पितृभ्यः एष वा अनृणो (तैत्तरीय संहिता यजुर्वेद)

तृतीयतः पितृभ्यो मनुष्येभ्यः। स यदेव यजेत। तेन देवेभ्य ऽऋणं जायते।। (शतपथ ब्राह्मण 7/1/2/7)

अर्थात हमारा देव-ऋषि-पितृ ऋण कैसे मुक्त हो इसकी हमको कोई चिन्ता नहीं है। मात्र "उदर भरै सोइ धर्म सिखावहिं।" में हम निरन्तर निरत हैं। देव पूजा से समस्त ऋण देव-ऋषि-पितृ-मनुष्यादि ऋणों से पूर्ण मुक्ति होने के बहुशः प्रमाण शास्त्रोल्लिखित है। मात्र श्राद्धादि से पितर स्वाध्यायादि से ऋषि पूर्ण प्रसन्न नहीं हो पाते। संपूर्ण अनृणता तो भक्ति से देव पूजा परायण तथा शारणागति से ही होती है।

त्रिसपृभिः पित, पूतः पितृभिः सहतेऽनध। (भागवत सप्तम स्कंध)

प्रहलाद जी को भगवान् कह रहे है। तेरी 21 पीढ़ियां बिना श्राद्ध तर्पण के वैकुण्ठस्थ हो गये हैं।

पू. गोस्वामी जी "**सो कुल धन्य उमा सुनु जगत्पूज्य सुपुनीत।**
श्री रघुवीर परायण जेहि नर उपज विनीत।।"

एतावता भविष्णु पीढ़ियों को इस वैदिक मार्ग की ओर लाना अत्यन्त आवश्यक है।

पाश्चात्य पुजारियों को इस पर विचार करना चाहिये कि शिश्नोदर परायण होना ही जीवन का लक्ष्य बनाना नितान्त अज्ञानता है। अतः इस पाप पंक से विमुक्ति के लिये हमारे आदर्श श्रीराम कृष्णादि-देवता श्री हनुमान प्रभृति पूत व्यक्तित्वों पर चिन्तन होना आवश्यक है। हमारे ऋषि-महर्षि-पूर्वज-आचार्य-गुरु-विद्वान-भारतीय हमारे आदर्श न होकर-भ्रष्ट नेता-अभिनेता-अप्रमाणित वक्ता अशास्त्रीय वार्ता हमारा आदर्श होता जा रहा है। यह दुर्भाग्य का विषय है। पश्चिम देशीय व्यक्ति अब धनांधता से त्रस्त होकर भारतीय वैदिक आराधना पद्धति से युक्त हो रहे हैं। निरन्तर भगवन्नाम जप-तिलक-कंठी-धोती-एकादशी-तीर्थ-पावन-नदियों-भगवान् के श्री विग्रहों के दर्शन-पूजन में संलग्न होकर अपना जीवन कृतार्थ कर रहे हैं। और हम अपने पूर्वजों की दायाद का बहिष्कार कर दीन-अनाथ-पथ भ्रष्ट

होते चले जा रहे हैं। यह अत्यन्त अवधेय विषय है।

कतिपय कुतर्कियों का तो यहाँ तक कथन है कि मूर्ति पूजा वेदों का विषय ही नहीं है। मूर्ति पूजा परवर्ती प्रक्रिया है वह अपढ़-अज्ञ तथा आरंभिक प्रशिक्षणार्थियों को समझाने की एक सामान्य प्रक्रिया है। उनके अनुसार जब मूर्ति पूजा का कोई प्राचीन प्रमाण, स्वरूप ही नहीं है तो पूजा करना तथा पूजा विधान को हृदयंगम करने की अपेक्षा ही क्या है। इन कुविचारियों को सङ्केत यह है कि-

मूर्ति पूजा के प्रमाण वेदों में पूर्णतः प्राप्त है यथा- अर्चत प्रार्चत प्रियमेधासो अर्चत। (ऋग्वेद 6/5/58/8)

अर्थात् हे बुद्धिमान मनुष्यों उस प्रतिमा का पूजन करो भलीभांति पूजन करो।

सहस्रस्य प्रतिमा असि।। यजुर्वेद 15/65

हे परमेश्वर आप सहस्रो रूप में प्रतिमाओं में विराजे हैं

मा असि प्रमा असि प्रतिमा असि।। तैत्तरीय. प्रपा 4/4

हे प्रभो आप ही प्रतिमा में विराजित है।

पत्थर में अवाहन-हे परमात्मा आप आकर इस पाषाण प्रतिमा में विराजमान होइये। यह आप का शरीर बन जावे और सभी देवता सैकड़ों वर्षों पर्यन्त इसमें आपकी विभूति को स्थिर करें।

एह्यश्मानमातिष्ठाश्मा भवतु ते तनूः।

कृष्णन्तु विश्वेदेवा आयुष्ट शरदः शतम्।। अथर्व-2/13/4

मूर्ति के अंग प्रत्यंग – हे पशुपते शिव आप के मुख को, तीन नेत्रों को, त्वचा रूप को, अंगों को उदर को जिहवा को और नासिका को नमस्कार हो। मुखाय ते पशुपते यानि चक्षूंषि ते भव। त्वचे रूपाय संदृशे प्रतीचीनायते नमः। अंगभ्यस्त उदराय जिह्वाय आस्याय ते दद्भ्यो गन्धाय ते नमः।।

प्राण प्रतिष्ठा-इस पाषाण प्रतिमा में आपके प्राण आवें, मन आवे, नेत्र और बल आवें।

एतु प्राणा एतु मनः एतु चक्षुरयो बलम्।। अथर्व. 5/30/12

पुनश्च - ऋषीणां प्रस्तरोऽसि नमोऽस्तु देव्याय प्रस्तराय

अथर्व 16/2/6

इस प्रकार वेदों में बहुशः प्रमाण मूर्ति स्थापना तथा मूर्ति पूजा के प्राप्त हैं। कुतर्कियों के तर्क का कोई आधार ही नहीं है। मूर्ति पूजा हमारा वैदिक-पौराणिक तथा प्राचीनतम आधार है। भगवान् श्रीराम द्वारा रामेश्वर प्रतिष्ठा-भगवान् श्रीकृष्ण बलराम-परशुराम-व्यास नारद-सनकादि जो भगवान् के ही अवतार हैं वे भी मूर्ति स्थापना करके इस वैदिक क्रिया को पूर्ण करते हैं। यदि यह तथ्य निराधार होता तो श्रीरामकृष्णादि के द्वारा क्यों आरंभ किया जाता ?

देव पूजा के संदर्भ में यह भी एक भ्रान्त धारणा शिवलिङ्ग के संदर्भ में व्याप्त है कि शिवलिङ्ग पूजा शिवजी का अङ्ग है। यह सर्वथा असत्य-कल्पित-भ्रामक-प्रक्षिप्त-विक्षिप्त व्याख्या है। शास्त्रों से सुदूर होने का यही दुष्परिणाम है। वस्तुतः शिवलिङ्ग की कथा-शिवपुराण-स्कन्दपुराण-लिंगपुराण-ब्रह्म पुराण-कूर्म पुराणादि में एक जैसा ही विवेचन प्राप्त है। यह कि शिवजी पिण्ड (स्तंभ) के रूप में ब्रह्मा तथा श्री विष्णु के समक्ष प्रकट हुये। वह शिवजी का महत्त्व पिण्ड-स्तंभ-लिंग के रूप में पूजित हो रहा है। जिसके प्रमाण सभी पुराणों-वेदों तथा प्राचीनतम शिल्पों में प्राप्त हैं। अतः शिवलिङ्ग को समझने की आवश्यकता है लिङ्ग का अर्थ - व्याकरण में लिङ्ग का अर्थ मूत्रेन्द्रिय ही नहीं पुल्लिंग-स्त्री लिंग-नपुंसक लिंग के रूप में प्रयुक्त हुआ है। वैशेषिक दर्शन में आकाश को लिंग का लक्षण कहा है।

निष्क्रमणं प्रवेशनमित्यकाशस्य लिङ्गम्।। (वैशेषिक 2/1/10)

व्यवहार जिसमें होते हैं यह काल का लिङ्ग अर्थात् चिन्ह लक्षण है। (वैशेषिक दर्शन 2/2/6)

अपरस्मिन्नपरं युगपच्चिरं क्षिप्रमिति काललिङ्गानि।।

ज्ञान की आत्मा का लक्षण अर्थात् लिंग है -

दुःख ज्ञाना न्यात्मनो लिङ्गम्।। (वैशेषिक 2/2/10)

न्यायदर्शन कहता है कि यहाँ-यह आदि व्यवहार यह दिशा का लिङ्ग अर्थात् लक्षण है-

इति इदमिति यतस्तदिृश्यं लिङ्गम्। न्यायदर्शन 1/10

एक समय में एक साथ अनेक वस्तुओं का ज्ञान होना मन का लिङ्ग अर्थात लक्षण है।

युगपज्ज्ञानानुपपत्तिर्मनसो लिङ्गम्। (न्याय दर्शन 1/16)

अर्थात् परब्रह्म परमात्मा का प्रतीक चिन्ह का लक्षण ही कहलाता है। मूत्रेन्द्रिय मानना यह मात्र मूर्खता है। यहाँ तक कि जिलहरी (जलाधारी) को योनि मानने की कुकल्पना भी विधर्मियों ने कर डाली। तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीराः (यजुर्वेद 31/29) शिवपुराण कार स्वयं लिख रहे हैं कि

लीनार्थगमकं चिन्हं लिंगमित्यभिधीयते।
भं बृद्धिं गच्छतीत्यर्थाद् भगः प्रकृतिरुच्यते।
मुख्यो भगस्तु प्रकृति भगवान् शिव उच्यते।।

(शिवपुराण विद्येश्वर 16/10/6)

अर्थात् अव्यक्तावस्थापन बहुत के गमक ज्ञापक चिन्ह को (लीन + ग) लिङ्ग कहते है। और भ = वृद्धि को ग = प्राप्त होने वाली वस्तु को भग कहते हैं। जो प्रकृति के नाम से ज्ञातव्य है।

लिङ्ग पुराण से लिङ्ग तथा जिलेहरी को समझना चाहिये, वहाँ लिखा है कि शिवलिङ्ग के मूल में ब्रह्मा, मध्य में विष्णु तथा ऊर्ध्व भाग में ओंकार स्वरूप शिव विराजमान है। यह साक्षात् परमात्मा तथा वेदी (जिलेहरी) साक्षात् भगवती जगदम्बा है।

मूले ब्रह्मा तथा मध्ये विष्णुस्त्रिभुवनेश्वरः।
रूद्रोपरि महादेवः प्रणवारव्यः सदाशिवः।।
लिंगवेदी महादेवी लिंगं साक्षात् महेश्वरः।
तयोः संपूज्यनान्नियं देवी देवश्च पूजितौ।। (लिंग पुराण)

एतावता अज्ञजनों द्वारा प्रचारित भ्रामक तथ्यों को बहिष्कृत करते हुये शास्त्रीय यथार्थ स्वरूप को ग्रहण करना चाहिये। विधर्मियों के काल में उनके प्रभाव-प्रलोभन में आकर पुराणों में भी प्रक्षिप्त गाथाओं को जोड़ा गया है। जिसका विवेचन परम पूज्य श्री माधवाचार्य जी ने अपने पुराण दिग्दर्शन ग्रंथ में किया है।

अतः मूर्ति पूजा का वैदिक-प्राचीनतम प्रमाण तथा आध्यात्मिक अनिवार्यता का तथ्य सुनिश्चित है। उसमें विधर्मियों की मान्यताओं को महत्त्व न देकर शास्त्र की दृष्टि से ध्यान देना चाहिये। भक्तिकाल में मीरा-सूरदास-तुलसीदास-नामदेव-तुकाराम-नरसी मेहता आदि समस्त संतों-महात्माओं को भगवत् प्राप्ति मूर्ति पूजन से ही प्राप्त हुई है। शंकरा चार्य-धर्माचार्य स्वामी करपात्रीजी आदि महामानवों ने भी मूर्ति पूजा को ही प्राधान्य देकर आत्म लाभ प्राप्त किया।

बहुत काल से पूजा के विषय में कुछ प्रश्न आते थे। विचार था कि इन बिन्दुओं का शास्त्रीय निर्णयात्मक स्वरूप प्रतिपादित किया जावे भगवान् की कृपा से वह आज पूर्ण हो रहा है। इस कार्य में व्याकरणाचार्य श्रद्धेय पं. डॉ. श्री भगवत्शरण जी शुक्ल, व्याकरण विभाग हिन्दू विश्वविद्यालय काशी ने भी मुझे सहमति तथा बिन्दुओं को स्पष्ट कराने में सहयोग दिया है। पूज्यपाद श्री ब्रह्मचारी जी बापोली बालों से भी कुछ बिन्दुओं पर परामर्श किया गया है। दोनों महापुरुषों का आभार है।

इस पुस्तक को सामान्य भाषा में लिखकर सामान्य जनों तक संस्कृति की यथार्थता पहुंचाना लक्ष्य रहा है। अभी भी कुछ अनिर्णीत बिन्दुओं पर शोध निरन्तर है। आगामी संस्करण में उनको भी स्पष्ट किया जायेगा, तथा विद्वानों से भी प्रार्थना है कि वे पढ़कर मार्गदर्शन देने की कृपा करें जिससे भविष्य के संस्करण में उनको भी नियोजित किया जाये।

■ डॉ. रामाधार शर्मोपाध्याय

विषय सूची

संदर्भ ग्रंथ सूची

ऋग्वेद

यजुर्वेद

सामवेद

अथर्ववेद

महाभारत

वा. रामायण

रामचरित मानस

श्री भागवत पुराण

श्री शिवपुराण

नारद पुराण

मत्स्य पुराण

कूर्म पुराण

वाराह पुराण

भविष्य पुराण

पद्म पुराण

विष्णु धर्मोत्तर पुराण

स्कन्द पुराण

लिंग पुराण

ब्रह्मवैवर्त पुराण

देवी भागवत पुराण

बृहद्धर्म पुराण

ब्रह्म पुराण

मार्कण्डेय पुराण

विष्णु पुराण

गरुड़ पुराण

नारद पुराण

अग्नि पुराण

कालिका पुराण

श्रीमद्भगवत् गीता

दुर्गा सप्तशती

पदार्थदर्श

निर्णय सिन्धु

धर्म सिन्धु

वीर मित्रोदय

प्रयोग पारिजात

विष्णु रहस्य

आन्हिक सूत्र

स्मृति सारावली

आचारेन्दु

सनातन धर्म मार्तण्ड

तत्व सागर संहिता

आचार रत्न

अत्रि संहिता

चरक संहिता

बौधायन स्मृति

बृद्ध गौतम स्मृति

मनु स्मृति

व्याघ्रपाद स्मृति

लिखित स्मृति

प्रतिष्ठा सार दीपिका

देव पूजा प्रकाश

मंत्र मदोदधि

हलायुध

बाधूल स्मृति

लौगाक्षि स्मृति

तृच भास्कर

चिन्तामणि

पूजा प्रकाश

शिव रहस्य

आचार मयूख

आपस्तंब गृह्यसूत्र

आचारार्क

तिथि तत्त्व

विष्णु रहस्य

पाराशर स्मृति

पिंगल सूत्र

वैशेषिक दर्शन

न्याय दर्शन

पूजा करने में आसन

पूजा पाठ करते समय आसन बिछाकर बैठना चाहिये। बांस के आसन से दरिद्रता, पत्थर पर बैठकर पाप, पृथ्वी पर बैठने से दु:ख, लकड़ी पर बैठकर दुर्भाग्य, (लकड़ी पर बैठकर या पत्थर पर बैठकर भी आसन बिछाने से दोष नहीं होता) तृणासन पर बैठने से पशुओं की हानि, पत्र (पत्तों की) आसन पर बैठने से चित्त में भ्रम, काले मृग चर्म पर बैठने से ज्ञान-मोक्ष तथा सिद्धि की प्राप्ति (किन्तु धर्म शास्त्रों में मृग चर्मासन पर गृहस्थ को बैठना निषेध लिखा है) धन-धर्म-शान्ति के लिये ऊर्णासन-कम्बलासन श्रेष्ठ होता हे

बंशासने दरिद्रः स्यात् पाषाणे पाप संभवः।
धरण्यां दु:ख संभूति दौर्भाग्यं दारुजासने।।
तृणासने पशोर्हानिः पल्लवे चित्तविभ्रमः।।
कृष्णाजिने ज्ञानसिद्धिर्मोक्षसिद्धिस्तु व्दाघुजे।।
धनदं शान्तिदं मोक्षः सर्वार्थाश्चैव कम्बले। (नारद पुराण)

जला हुआ-फटा हुआ आसन बिछाकर पूजा नहीं करें। सूती आसन भी मना है।

पैर से आसन खींचकर नहीं बैठे -

देव पूजा या भोजनादि के समय पैर से आसन खींच करके नहीं बैठना चाहिये।

वर्जयेदासनं चैव पदा नाकर्षयेद् बुधः।। स्कंद मा.कौ. 41/125
न पदासन माकर्षेत् (गौतम स्मृति 9) गौतम धर्म सूत्र 1/9/49)
नाकर्षेच्च पदासनम् (कूर्म पु. उ. 16/61) पद्म पु. स्वर्ग. 55/61

पूजा काल में आसन -

पद्मासन-स्विस्तिकासन-सुखासन वज्रासन तथा वीरासन पर बैठकर सूर्य को अर्घ्य दिया जा सकता है। पद्मासन-स्वस्तिकासन्-सुखासन पर पूजा-

पाठ-जप किया जा सकता है।

पद्मासनं स्वस्तिक च भद्रं वज्रासनं तथा।

वीरासनमिति प्रोक्ता क्रमादासन पंचकम्।। (देवी भागवत)

आसन निषेध -

लोहा-कांसा-सीसा की आसन पर पूजाकाल में नहीं बैठे।

आयसं वर्जयित्वा तु कांस्यसीसकमेव च।। (देवी भागवत)

पृथ्वी पर नहीं रखें -

गोरोचन, जपमाला, पुष्पमाला, कपूर, शंख-स्वर्ण-गाय का गव्य-घंटी ग्रंथ-पुस्तक-कुश की जड़-चंदन काष्ठ, रुद्राक्ष पृथ्वी पर रखने से नरक प्राप्ति होती है।

जपमालां पुष्पमालां कर्पूरं रोचनं तथा।

भूमौ चन्दनकाष्ठं च रुद्राक्षं कुशमूलकम्।

संस्थाप्य भूमौ नरके वसेन मन्वन्तरावधि।।

सना. धर्म.मातेण्ड पृ. 130

देव पूजा में वस्त्र -

देव पूजा में पुरुष को सिला हुआ वस्त्र, जला-कटा-फटा, दूसरे का पहिना हुआ, पक्षी की विष्ठा किया हुआ, बिना धोया हुआ, रजक के द्वारा धुला हुआ, शौच करने के समय पहिना हुआ, बिना जल लिये लघुशंका किया हुआ, मैथुन काल में धारण किया और नीला-काला वस्त्र नहीं पहिने। ऊनी वस्त्र सदा पवित्र है उनको धारणकर सकते हैं। ऊनी वस्त्र में लाल-श्वेत-लाल सभी रंग चल सकते हैं। (हारीत स्मृति) कमर तक आधी धोती पहिनकर आधी धोती ओढ़कर पूजा न करें। अकेली धोती पहिनकर देव-पितृ कर्म न करें। धोती तथा दुपट्टा दो वस्त्र होना आवश्यक है। पूजा पाठ में सिर पर वस्त्र धारण नहीं करें। तिलक लगवाने में भी सिर पर वस्त्र तथा हाथ

नहीं रखें (ब्रह्म वैवर्त पुराण)

नील दिया हुआ वस्त्र पहिनकर पूजा न करें -

कपड़ों पर नील देकर पहिन कर देव पूजा नहीं करनी चाहिये। हवनादि कर्म भी नील वस्त्र से नहीं करें। स्नान-सन्ध्या-जप-होम, वेदपाठ-रामायणपाठ-गीतापाठ-तर्पण तथा यज्ञ भी नील दिये वस्त्र से व्यर्थ हो जाते हैं।

स्नानं सन्ध्या जपो होमः स्वाध्यायः पितृतर्पणम्।

वृथा तस्य महायज्ञः नीली वस्त्रस्य धारणात्।। पुराण तथा धर्मशास्त्र

देवपूजा उकडू (प्रौढ़पाद) बैठकर न करें -

स्नान-दान-जप-होम-भोजन देव पूजा तथा स्वाध्याय उकडू बैठकर (प्रौढ़पाद) होकर नहीं करना चाहिये।

स्नानं दानं जपं होमं भोजनं देवतार्चनम्।

प्रौढ़पादौ न कुर्वीत स्वाध्यायं पितृतर्पणम्।। (अत्रि संहिता 323)

प्रौढ़पाद नहीं बैठे -

दान में आचमन में हवन में, भोजन में-देवपूजा में-तर्पण में तथा स्वाध्याय में प्रौढ़पाद (उकडू) न बैठें।

दानमाचमनं होमं भोजनं देवतार्चनम्।

प्रौढ़पादौ न कुर्वीत् स्वाध्यायं पितृतर्पणम्।। (आचार मयूख)

पूजा योग्य पात्र -

सोना-चांदी-कांसा-तांबा तथा मिट्टी के पात्र एवं पलाश (खाकर) तथा कमल के पत्रों में भी भगवान् की पूजा तथा नैवेद्य दिया जा सकता है।

नैवेद्यपात्रं वक्ष्यामि केशवस्य महात्मनः।

हैरण्यं राजतं कांस्यंताम्रं मृण्मयमेव च।। (स्कन्द पुराण)

सभी पात्रों में भगवान् को तांबे का पात्र अति प्रिय है।

तानि सर्वाणि संत्यज्य ताम्रं तु मम रोचते।। (वाराह पुराण)

ताँबे का पात्र –

तांबा मंगल रूप है। इसमें रखकर भगवान् को जो अर्पित किया जाता है, वह कई गुना फल देता है। भगवान् बहुत प्रसन्न होते हैं।

मांगल्यं च पवित्रं च ताम्रन्नेन प्रियं मम।

अतुला तेन मे प्रीति भूमे जानीहि सुव्रते।। (वराह पृ. 129/41-51)

संध्या में चांदी पात्रों का प्रयोग कर सकते हैं –

सन्ध्या करने में ऊमर-सोना-चांदी-काठ के पात्रों का प्रयोग कर सकते हैं।

औदम्बरे च सौवर्णे राजते दारूसंभवे।

कृत्वा तु वामहस्ते वा सन्ध्योपास्ति समाचरेत्।। (प्रयोग पारिताते)

गोकर्णाकृति वत्पात्रं ताम्रं रौप्यं च हाटकम्

जलं तत्र विनिक्षिप्य सन्ध्योपासनमाचरेत्।। (आन्हिक)

विष्णु महापुराण में देवपूजा में चांदी के पात्रों का भी उल्लेख है। पितृ पूजा में चांदी पात्र अति श्रेष्ठ माने जाते हैं। पितरों को चांदी अति प्रिय है।

संध्या में पात्रों का निषेध –

कांसा-लोहा-सीसा-पीतल के पात्रों से संध्या आचमन नहीं करें। सौ बार आचमन से भी शुद्धि नहीं होती।

कांसेनायसपात्रेण त्रपुसीसकपित्तलैः।

आचान्तः शतकृत्वोऽपि न कदाचल शुद्धयति।। (आन्हिक)

पृथ्वी पर नहीं रखें –

दीपक-शिवलिंग-शालग्राम-मणि देव प्रतिमा-शंख-मोती-माणिक्य हीरा-स्वर्ण-तुलसी रुद्राक्ष, पुष्पमाला, जपमाला, पुस्तक, यज्ञोपवीत, चन्दन, फूल-कपूर, गोरोचन, कुश की जड़ इनको भूमि पर रखने से महापाप लगता है।

(देवी भागवत् पु. 9/10/19-26)

वस्त्र धारण –

देवपूजा में लाल–काला–नीला–वस्त्र कभी धारण नहीं करना चाहिये। बिना धोया वस्त्र भी न पहिने।

रक्तवस्त्रेण संयुक्तो यो हि मामुपसर्पति।

यः पुनः कृष्णवस्त्रेण मम कार्य परायणः।

देवि कर्माणि कुर्वीत नस्य वै पातनं श्रृणु।। (वाराह पु. 135/1)

नीले रंग का वस्त्र तो अति निषेध है। श्वेत वस्त्र पर भी नील लगाकर पूजा–पाठ करने से कोई फल प्राप्त नहीं होता।

स्नानं संध्या जपो होमः स्वाध्यायः पितृतर्पणम्।।

नील लगा हुआ वस्त्र पहिनकर स्नान–संध्या–तर्पण–हवन यज्ञ सभी निरर्थक हो जाता है।

किन्तु स्त्रियों के लिये नीली लाल साड़ी पहिनने का दोष नहीं है।

गीले वस्त्र पहिनकर भी पूजा–पाठ–जप–होम दान मना है।

"आर्द्रवासास्तु यत्कुर्याद् बहिर्नानु च यत्कृतम्।

तत्सर्वं निष्फलं कुर्पाज्जप होम प्रतिग्रहम्" (लिखित स्मृति 63)

देवता तथा पूजक का मुख –

जिन प्रतिमाओं का मुख पूर्व दिशा में वहां पूजा उत्तर मुख करके करना चाहिये। यह नियम स्थिर प्रतिमा के विषय में है चल प्रतिमा के लिए नहीं। (प्रयोग पारिजात) घर में चल प्रतिमाओं में भगवान् की ओर ही मुख करें वहाँ दक्षिण–पश्चिम का निषेध नहीं है।

फूल–तुलसी तोड़ना–चढ़ाना –

वैधृति–व्यतिपात–मंगल, शुक्रवार रविवार–पूर्णिमा–अमावस्या–संक्रांति दोनों द्वादशी–मरणसूतक तथा जन्म सूतक इनमें कभी तुलसी को नहीं तोड़े। रात्रि में तथा संध्याकाल में भी तुलसी नहीं तोड़े। किन्तु भगवान् के लिये

तुलसी, यज्ञ के लिये समिधा तथा गाय को तृण अमावस्या आदि निषेध दिनों में भी तोड़ सकते हैं।

देवार्थे तुलसी होमार्थे समधिां तथा।

इन्दुक्षयेन दुष्येत गवार्थे तृणस्य तथा पूर्णिमा,-अमावस्या-द्वादशी-सूर्य संक्रांति, मध्यान्हकाल, रात्रि, दोनों सन्ध्यायें, अपवित्र अवस्था में रात्रि में सोने के पश्चात् और बिना स्नान किये और शरीर में तेल लगाने के बाद तुलसी पत्र तोड़ने में दोष लगता है। (ब्रह्मवैवर्त पु. 21/50)

तुलसी और विल्वपत्र माली के घर में तथा जल में वासी नहीं होता। कनेर पुष्प दिन रात तक वासा नहीं होता। पुष्प और जल ये बासे नहीं चढ़ाना चाहिये। किन्तु तुलसी पत्र, गंगाजल और नर्मदाजल ये वासी नहीं होता। पद्म पुराण में लिखा है कि तुलसी वासी नहीं होती तथा विल्वपत्र तीन दिन तक बासा नहीं होता। पांच दिन तक कमल का पुष्प बासा नहीं होता।

तुलसी पर्युषिता नैव, विल्वं तु त्रिदिनावधि।

पद्मं पञ्चदिना त्याज्यं शेष पर्युषितं विदु.।। पअ पु.

किन्तु स्कन्ध पु. में लिखा है कि पलास (खकरा) एक दिन, कमल तीन दिन, वेलपत्र पांच दिन, तुलसी पत्र दस दिन तक वासा नहीं होता।

पालाशं दिनमेकं तु पंकजं च दिन त्रयम्।

पञ्चाहं विल्वपत्रं च दशाहं तुलसी दलम्।। स्क.पु.

पदार्थादर्श में वोपदेव ने लिखा है कि विल्वपत्र 30 दिन तुलसी छहै दिन, केतकी नौ दिन, भगरा, आठ दिन, दूर्वा एक दिन मन्दार एक दिन, कमल दो दिन, नागकेसर एक दिन, कुशा तीस दिन, अगस्त्य तीन दिन, तिल एक दिन, तगर छै दिन ब्राह्मी ग्यारह दिन, चमेली नौ दिन, चम्पा आठ दिन, कनेर एक दिन, गुलाब एक दिन, मौलश्री एक दिन, बकुल एक दिन तक बासा नहीं होता। (पदार्थादर्श तथा निर्णय पृ. 530) स्कन्द पुराण में कहा है कि

मौलसिरी की माला भगवान् को परम प्रिय है। सूखी तथा बासी भी मौलसिरी दूषित नहीं होती किन्तु मत्स्य पुराणानुसार विल्व पत्र, कुन्द, तमाल, आंवले के पत्र, तुलसी, कमल, अगस्त्य और कुश के कभी भी वासा नहीं होता।

विल्वपत्रं च माध्यं च तमालामलकीदले।

कल्हारं तुलसी चैवपद्मं च मुनिपुष्पकरम्।।

एतत्पर्युषितं न स्यात्कुशश्च कलिकास्तथा।।

स्मृति सारावली में कहा है कि जल में रहने वाले फूल पत्ते, बिना टूटे फूल, कुशा के फूल, चांदी और स्वर्ण के फूल और तीर्थ का जल ये कभी वासे नहीं होते। भगवान् को मुकुल (कली) न चढ़ावे। भूमि पर गिरा हुआ, जल में गिरा हुआ, भगवान् को चढ़ाया हुआ तुलसीपत्र धोकर पुनः शुद्ध माना जाता है।

भूगतं तोय पतितं यद्दत्तं विष्णवे सति।

शुद्धं तु तुलसीपत्रं क्षालनादन्यकर्मणि।।

ब्रह्मवैवर्त 21/52 देवी भागवत 9/24

देवपूजा में थूँकना-छींकना मना है -

भोजन, देवपूजा, मांगलिक कार्य और जप तथा हवन कार्य में, श्रेष्ठ पुरुषों के सामने थूंकना-छींकना दोनों निषेध हैं।

श्लेष्म शिङ्घाणिकोत्सर्गो नात्रकाले प्रशस्यते।

बलि मंगल जप्यादौ न होमे न महाजने।। विष्णु पु. 3/12/29

यदि अचानक छींक आ जावे तो देव पूजा को रोककर आचमन तथा प्राणायाम के पश्चात् जप-पूजा आरंभ करे।

मंगल कार्य में नाक से कफ न निकाले -

वायु-अग्नि-जल-सूर्य, चंद्रमा, ब्राह्मण, गाय आदि पूज्य जनों के सामने थूकना नहीं चाहिये। जहाँ जन समूह एकत्र हो, भोजन का समय उपस्थित हो, जप, होम, देवार्चा, अध्ययनादि मंगल कार्यों में मुख या नाक से कफ नहीं

निकालना चाहिये। सुदूर एकान्त में जावे।

न वायन्यग्नि सनिल सोमार्क द्विज गुरु प्रतिमुखं निष्ठीविका न जनवति नान्नकाले न जपहोमाध्ययन बलि मंगल क्रियासु श्लेष्मसिङ्घाणकं मुंचेत्।। (चरक संहिता सूत्र 6/21)

जूठे मुंह देवता को न छूवे –

कुछ खा लिया हो, अथवा जूठे हाथ हों तब इस उच्छिष्ठ अवस्था में देवता को, पूजा सामग्री को, गाय, ब्राह्मण, अग्नि, देवप्रतिमा, गुरु, बैठने को आसन, पुष्प वाले वृक्ष, यज्ञोपयोगी वृक्ष तथा अपने मस्तक का स्पर्श नहीं करना चाहिये।

उच्छिष्ठो न स्पृशेदग्निं ब्राह्मणं दैवतं गुरुम्।
स्वशीर्ष पुष्पवृक्षं च यज्ञवृक्षमधार्मिकम्।। पद्म पु. सृष्टि. 51/92

शंख-स्वर्ण-चांदी के पात्र जल के धोने से ही पवित्र -

स्वर्ण चांदी के पात्र घृतादि से चिक्कण न हों तो जल के धोने मात्र से पवित्र हो जाते हैं– शंख भी जल के धोने मात्र से ही पवित्र हो जाता है।

स्वर्ण रौप्यादि पात्रं तु जल मात्रेण शुद्धयति।। पद्म सृष्टि. 51/82
पात्राणा ञ्चाससनाञ्च वारिणा शुद्धिरिष्यते।। गरुड़ पु. 97/1

मल मूत्र के वेग में अशुद्धि –

जब तक व्यक्ति को मलमूत्र का आवेग नहीं है तब तक वह पूर्ण पवित्र है। मलमूत्र के आवेग आते ही वह अपवित्र हो जाता है। अतः इनका त्याग करके शुद्धि करके ही देवपूजा की पात्रता पाता है।

यावत्तु धारयेद्वेगाः तावत्प्रयतो भवेत्। (वृद्ध गौतम स्मृति 12/16)
यावत् तु धारयेद वेगं तावत्प्रयतो भवेत्। (महाभारत आश्व. 92)

घर में कुत्ता पालन मुर्गा पालन –

यदि व्यक्ति घर में कुत्ते का पालन, मुर्गा पालन करता है। उसको छूता है,

साथ रखता है घर में घूमता रहता है, ऐसे व्यक्ति के घर में देवता पूजा ग्रहण नहीं करते तथा पितर पिण्ड ग्रहण नहीं करते है।

कुक्कटे शुनके चैव हविर्नाशनन्ति देवताः।। (महाभारत अनु. 127/16)

देव पूजा में, श्राद्ध में, तर्पण–होम–दान और ब्राह्मण भोजन पर यदि कुत्ता की दृष्टि पड़ जावे तो ये सभी कर्म निष्फल हो जाते हैं।

चाण्डालश्च वराहश्च कुक्कुटः श्वा तथैव च।
रजस्वला च षण्डश्च नेक्षेरन्नश्नतो द्विजान्।
होमे प्रदाने भोज्ये च यदेभिरभिवीक्ष्यते।
दैवे कर्मणि पित्र्ये वा तद् गच्छत्ययथातथम्।। (मनुस्मृति 3/239)

यदि घर में कुत्ता पोषित है तो वह भ्रमण भी करेगा, उसकी दृष्टि भी सर्वत्र पड़ेगी। वह जनों को छूता भी रहता है। सूंघता है अतः वे सभी देवपूजा के योग्य नहीं रह जाते। आजकल तो मंदिरों में भी कुत्तों का प्रवेश गृहस्वामियों के द्वारा किया जा रहा है।

पूजा में संकल्प –

तिल–अक्षत–कुश (दूर्वा) और जल इनको हाथ में लेकर ही संकल्प करना चाहिये। अन्यथा दान का फल प्राप्त नहीं होता। पितरों को संकल्प में तिल, देवताओं को अक्षत रख कर संकल्प करे। पर कुश तथा जल दोनों को आवश्यक है। कुश के अभाव में दूर्वा भी काम में ली जा सकती है। यदि ये द्रव्य हाथ में नहीं लिये जाते तो वह द्रव्य दैत्यों को प्राप्त हो जाता है।

तिलैर्युक्तं पितृणां च देवानामक्षतैः सह।
तोयं दर्भाश्च सर्वत्र एवं गृहणन्ति नासुराः।।
एतान्विना प्रदत्तं दैत्यैः प्रगृह्यते।। (स्कन्द पु.मा.को. 40/169)

मंदिर में प्रवेश –

मन्दिर या घर के पूजागृह में प्रवेश करने के पूर्व बाहर दरवाजे पर आचमन

करे तथा तीन तालियां बजाकर विनम्र होकर मंदिर में प्रवेश करना चाहिये।

बासा जल मना है -

पूजा में बासा जल मना है।

'जलं पर्युषितं त्याज्यम्' किन्तु गंगा जल तथा कोई भी तीर्थ जल बासा नहीं होता।

गाङ्गवारि न दुष्यति।। (शिवरहस्य)

पूजा की वस्तुयें कहाँ रखें-दीपक कहाँ रखें -

सुन्दर पवित्र जल, घंटा, धूपदानी तथा तैल दीप बांई ओर रखें। देवता के बांई ओर रखें।

सुवासित जलैः पूर्णं सव्ये कुंभं प्रपूजयेत।।

घंटां वामदिशि स्थिताम्। (पूजा प्रकाश)

घृत का दीपक तथा शंख देवता के दाहिनी ओर रखे।

घृतदीपो दक्षिणतस्तैल दीपस्तु वामतः।। (महोदधि)

कुंकुम केसर-घिसा चंदन-देवता के सामने रखे।

किन्तु घिसा चंदन ताम्रपात्र में न रखें। दूध-दही भी कभी तांबे के बर्तन में नहीं रखें। (आचारेन्दु)

ताँबे के बर्तन में नहीं रखें -

चन्दन-घृत-दूध-दधि-मिठाई ताम्रपात्र में नहीं रखनी चाहिये सुरा और विष के समान होती है।

चंदनं घृतदुग्धं च, दधिमिष्ठान्नमेव च।
ताम्रपात्रे न दातव्यं सुरातुल्यं विषं समम्। (हलायुध)

''**ताम्रे गव्यं सुरा समम्**'' तांबे के पात्र में घी-दूध-दही मदिरा के समान हो जाता है। (स्मृतिसार)

भूमि पर दीपक न रखें –

जो दीपक भूमि पर रखता है वह सात जन्म तक अंधा होता है। भूमि पर शंख रखने वाला कुष्ठी, तथा हीरा-मोती-स्वर्णादि भी पृथ्वी पर नहीं रखा चाहिये।

भूमौ दीपं योऽर्पयति सचान्धः सप्त जन्मसु। (सनातन धर्ममार्तण्ड 326)

देवता का निर्माल्य कैसे उतारें –

मूर्तियों के ऊपर चढ़े हुये पुष्प दूर्वा, बीलपत्र, को मूर्ति से उतारने को निर्माल्य कहते है। शिवजी-शालग्राम का अन्य मूर्ति पर से निर्माल्य को तर्जनी तथा अंगुष्ठ से उठाकर दूर करे। तर्जनी अंगूठे के पास वाली उंगली को बोलते है। मध्यमा और अनामिका से पुष्पार्पण देवताओं पर करना चाहिये।

मध्यमानामिका मध्ये पुष्पं संगृह्य पूजयेत्।

अंगुष्ठ तर्जन्य ग्राभ्यां निर्माल्यमपनोदयेत्।। (प्रयोग पारिजात-क्रियासार)

तिलक धारण –

बिना तिलक धारण किये सन्ध्या पूजा-जप-हवन-सत्यनारायण सभी व्यर्थ हो जाता है। अतः तिलक धारण परमावश्यक है।

सत्यं शौचं जपो होमस्तीर्थ देवादि पूजनम्।

तस्यव्यर्थमिदं सर्वं यस्त्रिपुण्ड्ं न धारयेत्।। (भविष्य पु.)

पुरुष दीप नहीं बुझावें –

स्त्री को कुष्मांड नहीं काटना चाहिये। यदि पुरुष दीपक बुझावें और स्त्री कूष्माण्ड (कुम्हड़ा) काटे तो वंश का विनाश होता है। (सनातन धर्ममार्तण्ड)

देव पूजन में मस्तक पर तिलक आवश्यक –

शिवलिंग शालग्रामादि देव पूजा में मस्तक पर तिलक आवश्यक है।

अशूण्यमस्तकं लिंगं सदा कुर्वीत पूजकः ।।

शिव पूजा में तो भस्म धारण तथा रुद्राक्ष दोनों ही परमावश्यक है। यदि नहीं धारण करते तो शिवपूजा के फल की प्राप्ति नहीं होती।

बिना भस्मत्रिपुण्ड्रेण बिना रुद्राक्षमालया।
पूजितोऽपि महादेवो न स्यात्तस्य फलप्रदः ।। (तिथितत्त्व)

दीपक पृथ्वी में न रखे –

देव पूजा में दीपक भूमि पर नहीं रखे। अन्न (गेहूं–चावल) पर रखें। भूमि पर दीपक रखने वाला सात जन्म तक अंधा होता है। शंख भूमि पर रखने वाला रोगी, स्वर्ण भी भूमि पर रखने वाला रोगी होता है।

भूमौ दीपं योऽर्पयति स चान्धः सप्त जन्मसु।
भूमौ शंखं च संस्थाय्य कुष्ठं जन्मान्तरे लभेत् ।।

शिवलिंग–शालग्राम–पूजा की वस्तु–तुलसी, पुष्प भी भूमि पर कभी नहीं रखे। (सनातन धर्म मार्तण्ड)

पञ्च देव पूजा सभी कार्यों में करना चाहिये –

सूर्य, गणेश, दुर्गा, शिव, विष्णु ये पञ्च देव हैं। इनकी पूजा सभी कार्यों में करनी चाहिये।

आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम्।
पञ्च देवत्यमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत् ।। (मत्स्य पुराण)

मानसजी में भी अयोध्या वासी पंचदेवोपासना रत हैं–

करि मज्जन पूजहिं नरनारी। गणप गौरि त्रिपुरारि तमारी।
रमा रमण पद बंदि बहोरी। विनवहिं अंजलि अंचल जोरी ।।

(अयोध्या काण्ड)

कुछ लोगों का ऐसा मनः कल्पित मन्तव्य है कि जो शिव पूजक हैं वे कुछ भी भक्ष्याभक्ष्य ग्रहण कर सकते हैं। ऐसी उनकी मान्यता अनुचित है। शिव भक्ति करने वालों को भी परम सात्विक रहना चाहिये। शिवजी अभक्ष्य भक्षी जनों से दूर हो जाते हैं-

क्व मांसं क्व शिवे भक्तिः क्व मद्यं क्व शिवार्चनम्।

मद्य मांस रतानांतु दूरे तिष्ठति शंकरः।।

शिवजी-काली-भैरव-हनुमानजी इनको जो तमोगुणी देवता मानते हैं, उन्होंने उचित स्थान पर विद्या ग्रहण नहीं की है, वे अज्ञानी है। गीता में भगवान् कह रहे हैं "अधोगच्छन्ति तामसा:" वे नरक जायेंगे। किन्तु शास्त्रों में शिवोपासक-काली उपासक ये सभी मोक्ष भागी हैं, फिर वे तमोगुणी देवता कैसे हो सकते हैं। भैरव जी भी शिवावतार हैं हनुमानजी भी शिवावतार हैं। उनमें तमोगुण कैसा? लोगों ने तो अपनी बुद्धि वैषम्य से पुराणों तक को सत्त्वगुण रजोगुण, तमोगुण तक की संज्ञा दे डाली, जो सर्वथा अप्रमाणित है बलि चढ़ाने की परम्परा भी पूजा का अंग नहीं है। वह काल्पनिक है। अपनी जिह्वा तृप्ति का साधन है। अतः देव पूजा में मांस, मदिरा निषेध है तथा पूजा करने वालों को मांस मदिरा सेवन नहीं करना चाहिये।

प्रतिमा की धातुयें -

मिट्टी-काठ-पत्थर, लोहा-चित्रित-मणि-मनोमयी ये आठ प्रतिमा का वर्णन भागवत में है-

शैली दारुमयी लौही लेप्या लिख्या च सैकती।

मनोमयी मणिमयी प्रतिमाऽष्ट विधा-स्मृता (भागवत)

पंचरात्र में लिखा है कि लाख, गोमेद तथा मोम की प्रतिमा नहीं बनानी चाहिये। काष्ठ की प्रतिमा यदि बनावे तो (मधुक) महुआ की लकड़ी की प्रतिमा बनावें।

तत्र काष्ठेषु मधुकमानीय च वसुन्धरे।
कृत्वा तत्प्रतिमां चैव प्रतिष्ठाविधिनार्चयेत।। (वाराह पुराण)

प्रतिमा की ऊँचाई –

देवी पुराण में वर्णन है कि सात अंगुल से बारह अंगुल तक की प्रतिमा घर में उत्तम होती है, किन्तु मंदिरों में उससे बड़ी प्रतिमा होनी चाहिये।

शिवलिंग के विषय में विशेष वर्णन है कि मिट्टी, भस्म, गोबर, गेहूँ का चूर्ण, इनको निर्माण करके जो एक बार भी पूजन करता है वह दश सहस्र वर्ष तक स्वर्ग में निवास करता है। काष्ठ का शिवलिंग सभी कामनाओं को पूर्ण करता है। स्फटिक के शिवलिंग से भी संपूर्ण कामना सिद्धि होती है। (भविष्य पुराण)

प्रयोग पारिजात में कहा है कि नौ–सात–अंगुल का शिवलिंग श्रेष्ठ, छै-पांच–चार अंगुल का लिंग मध्यम तथा तीन–दो–एक अंगुल का शिवलिंग कनिष्ठ होता है। (निर्णय सिन्धु पृ. 502)

भग्न (टूटी) प्रतिमा की पूजा नहीं –

प्राय: मोहवश जन भग्न मूर्ति का ही पूजन करते रहते हैं किन्तु इस तरह की पूजा से गृहस्थ को नित्य उद्वेग प्राप्त होता है। अग्नि में जली हुई मूर्ति का भी पूजा न करें। इनका विसर्जन करना चाहिये।

गृहेऽग्नि दग्धा भग्नाश्च नार्च्या: पूज्या वसुन्धरे।
एतासां पूजनान्नित्यममुद्वेगं प्राप्नुयाद्गृही।। (पद्म पुराण)

यदि शालग्राम शिला टूटी है। वह पूजा के योग्य है। उसमें दोष नहीं है।

पूजा सभी पृथक पृथक करें –

यदि परिवार सभी इकट्ठा है। एक ही भोजनालय में सभी का भोजन बन रहा है, तो भी देव पूजा अलग–अलग (पृथक) करें। ब्रह्मयज्ञ–देवपूजा-अग्निहोत्र तथा संध्या परिवार के अर्ह पुरुषों को पृथक् पृथक् करना चाहिये।

संयुक्त परिवार में बलिवैश्वदेव एक ही व्यक्ति करेगा।

पृथगप्येक पाकानां ब्रह्मयज्ञो द्विजातीनाम्।

अग्निहोत्र सुरार्चा च संध्या नित्यं भवेत् पृथक्।।

(प्रयोग पारिजात) निर्णय सिन्धु पृ. 503

बिना यज्ञोपवीत शालग्राम स्पर्श नहीं –

बिना यज्ञोपवीत अनुपनीत व्यक्ति को शालग्राम का स्पर्श नहीं करना चाहिये

स्त्रीणामनुपनीतानां शूद्राणाञ्च जनेश्वर।

स्पर्शने नाधिकारोऽस्ति विष्णोर्शंकरस्यच।। (स्कन्द पु.)

यदि भक्ति विशेष हो तो स्त्री तथा शूद्र बिना स्पर्श किये शालग्राम की पूजा दूर से कर सकते हैं।

यदि भक्तिर्भवेत्तस्य स्त्रीणां वापि वसुन्धरे।

दूरादेवास्पृशन् पूजां कारयेत्सुसमाहितः।। (वाराह पु.)

शालग्राम शिला का आकार –

शालग्राम शिला जितनी छोटी होगी उतनी ही फलदायी है। आँवले के फल के बराबर भी श्रेष्ठ है।

यथा यथा शिला सूक्ष्मा तथा स्यात्तु महत्फलम्।

तत्राप्यामलकी तुल्या पूज्या सूक्ष्मैव या भवेत्।। (पद्म पु.)

जहाँ शालग्राम शिला विराजती हैं वहां चारों ओर से तीन योजन (12 कोश) पर्यन्त पृथ्वी वाराणसी के समान पवित्र है।

वाराणस्या यवाधिक्यं समन्ताद्योजन त्रयम्।।

यो मृतस्तत्समीपे तु मृतो वा नीयतेऽन्तिकम्।।

सवै मोक्षमवाप्नोति सत्यं सत्यं न संशय।। (वाराह पु.)

बिना शिवपूजा के भोजन नहीं करें –

चाहे प्राण का त्याग करना पड़े, अथवा सिर भी कटवा देने पर बिना शिवपूजा के भोजन नहीं करें।

वरं प्राणपरित्यागः शिरसो वापि कर्तनम्।

न चैवापूज्य भुञ्जीत् शिवलिंगे महेश्वरम्।।

(लिंगपुराण, निर्णय पृ. 507)

स्त्री शिव पूजा करें –

स्त्रियां भी शिव पूजा कर सकती हैं। वे "शिवाय नमः" इस मंत्र से पूजा करें। स्त्री को नमः शिवाय नहीं बिना प्रणव के शिवाय नमः ही जपना चाहिये तथा पूजा करते समय भी इसी मंत्र का प्रयोग करें।

"**नमोऽन्तेन शिवेनैव स्त्रीणां पूजा विधीयते**" (तिथितत्त्व तथा धर्म सिन्धु पृ. 498) पूज्य गुरुदेव वापोली वाले ब्रह्मलीन गुरुजी भी यही कहते थे कि स्त्री "शिवाय नमः" ही बोले।

स्पृश्य शूद्रों को भी 'शिवाय नमः' मंत्र श्रेष्ठ है।

शालग्राम शिला संख्या –

घर में दो शालग्राम की पूजा न करें दो से अधिक सम संख्या में पूजा करें 4-6-8-10-12 आदि विषम संख्या में शालग्राम घर में नहीं रखें विषम संख्या में एक संख्या ग्राह्य है। सम संख्या में दो शालग्राम की पूजा नहीं करना चाहिये।

ब्राह्मण को नित्य शालग्राम पूजा –

ब्राह्मण को नित्य शालग्राम–द्वारावती चक्र शिला का नित्यमेव पूजा करनी चाहिये।

शालग्राम शिलां वापि चक्रांकित शिलां तथा।

ब्राह्मणः पूजयेन्नित्यम् ---। (विष्णु धर्म पु. निर्णय पृ. 503)

देवी भागवत पुराण में भी विप्र को नित्य शालग्राम (विष्णु) का पूजा का आदेश है। यदि ब्राह्मण पूजा नहीं करे तो वह सत्त्वहीन हो जाता है–

विष्णु भक्ति विहीनश्च त्रिसंध्यरहितो द्विजः।

एकादशी विहीनश्च विषहीनो यथोरगः।। देवीभाग

सभी देवों का पूजन एक ही स्थान पर –

गंगाजी–शालग्राम तथा शिवलिंग में सभी देवताओं का पूजन बिना किसी आवाहन विसर्जन के किया जा सकता है। नर्मदा आदि पावन नदियों में भी कर सकते हैं।

गंगा प्रवहि शालग्राम शिलायां च सुरार्चने।

शिवलिङ्गेऽपि सर्वेषां देवानां पूजनं भवेत्।। (बृहद्धर्म पुराण अ.57)

देवता के सामने पैर न फैलावे –

गुरु–ब्राह्मण, अग्नि, देवता और गाय के सम्मुख पैर फैलाकर नहीं बैठना चाहिये।

पादौ प्रसारयेन्नैव गुरु देवाग्नि सम्मुखौ।। (स्कन्द 41/127)

देवपूजा में मुख –

देवपूजा पूर्वाभिमुख अथवा उत्तर मुख होनी चाहिये। पितृपूजा दक्षिणमुख होती है।

उदङ्मुखस्तु देवानां पितृणां दक्षिणाभिमुखः।। स्कन्द पु.प्र.भास 206/18

दीपक स्पर्श में हाथ धोवें –

पूजाकाल में यदि दीपक छू जावे तो हाथ धोना चाहिये। अन्यथा दोष लगता है।

दीपं स्पृष्ट्वा तु देवि मम कर्माणि कारयेत्।

तस्यापराधाद्वै भूमे पापं प्राप्नोति मानवः।। (वाराह पु. 136/1)

दीपक कहाँ रखें –

घृत का दीपक देवता के दायें भाग में तथा तैल का दीपक देवता के बाये (वाई) भाग में रखना चाहिये।

घृतदीपो दक्षिणे स्यात् तैल दीपस्तु वामतः ।। (मंत्रमहोदधि 22/119)

घृत का दीपक गोल बत्ती खड़ी रखें। तैल के दीपक में लंबी बत्ती बनाने तथा खड़ी न रखे,, तिरछी रखे।

शालग्राम–तुलसी–शंख एक साथ –

शालग्राम, तुलसी और शंख एक साथ रखने में भगवान् बहुत प्रसन्न होते हैं। शालग्राम के ऊपर से तुलसी नहीं हटाना चाहिये।

शालग्रामं च तुलसीं शंखमेकत्र एव हि।
यो रक्षति महाज्ञानी स भवेत् श्री हरि प्रियः।।

(ब्रह्म वैवर्त, शिव पु., देवी भागवत्)

जो शालग्राम से तुलसी दूर करता है वह सात जन्म तक रोगी–दुःखी होता है।

गृह पूजा में प्रतिमा –

घर में पूजा के लिये देव प्रतिमा अंगूठे के पर्व से लेकर एक बीता के प्रमाण की होना चाहिये। इसके बड़ी प्रतिमा घर में शुभ नहीं।

अंगुष्ठपर्वादारभ्य वितस्तियोवदेव तु।
गृहेषु प्रतिमा कार्या नाधिका शस्यते बुधैः।। (मत्स्य पु. 258/22)

घर में प्रतिदिन पूजा के लिये स्वर्ण आदि धातु की बनी प्रतिमा ही कल्याणदायिनी होती है। कम से कम एक अंगूठे के बराबर तथा अधिक से अधिक एक बीता की हो। जो प्रतिमा टेढ़ी हो, जली हुई हो खण्डित हो जिसका मस्तक या आंख फूटी हुई हो अथवा जिसे चाण्डालादि अस्पृश्य पतित मनुष्यों ने छू दिया हो ऐसी प्रतिमा की पूजा नहीं करनी चाहिये। (नारद पुराण पूर्व. 67/32–33)

गृह में प्रतिमा की संख्या –

घर में दो शिवलिंग, तीन गणेश, दो शंख, दो सूर्य प्रतिमा, तीन देवी प्रतिमा, दो गोमती चक्र, दो शालग्राम की पूजा नहीं करनी चाहिये। ऐसा करने से गृह स्वामी को दुःख तथा अशान्ति की प्राप्ति होती है।

शंखं चक्र शिला लिंग विघ्न सूर्य द्वयं तथा।

शक्ति त्रयं न चैकत्र पूजयेद्दुख कारणम्।। नारद पु. 67/120

गृहे लिंगद्वयं नार्च्यं शालग्राम त्रयं तथा।

द्वे चक्रे द्वारकायास्तु नार्च्यं सूर्यद्वयं तथा।

गणेशत्रितयं नार्च्यं शक्तित्रितयमेव च।। वाराह पु. 286/40–41

आठ पुष्प सभी को चढ़ावें –

अहिंसा, इन्द्रियजय, दया, शान्ति, शम, तप, ध्यान और सत्य से अष्ट पुष्प सभी देवताओं को प्रिय हैं।

अहिंसा प्रथमं पुष्पं पुष्पमिन्द्रिय निग्रहः सर्वपुष्पं दयाभूते पुष्पं शान्ति विशिष्यते शमः पुष्पं तपः ध्यानंपुष्पं च सप्तमम्। सत्यं चैवाष्टमं पुष्पमे तैष्तुष्यति– केशवः।। अग्नि पु. 202/18

दीपक कहाँ रखें –

घृत का दीपक देवता के दाहिने भाग में रखना चाहिये।

घृतदीपो दक्षिणे स्यात तैल दीपस्तु वामतः।। (मंत्रमहो. 22/119)

दीपक की दिशा –

देवता के निमित्त तथा द्विज के घर में दीपक का मुख पूर्व या उत्तर करना चाहिये। पितरों के निमित्त दीपक दक्षिण मुख रखना चाहिये।

प्राङ्मुखोदङ्मुखं दीपं देवागारे द्विजालये। कुर्याद् याम्यमुखं पैत्र्ये अद्भिः संकलय सुस्थिरम्।। (निर्णय सिन्धु)

पंचोपचार-दसोपचार-षोडस (सोलह उपचार)

पंचोपचार-दसोपचार-पुष्प-दीपक-नैवेद्य

पंचोपचार-जल-चंदन-पुष्प-दीपक-नैवेद्य

पंचोपचार

ध्यानमावाहनं चैव भक्त्या यच्च निवेदनम्।

नीराजनं प्रणामश्च पञ्च पूजोपकारकाः ।।

ध्यान-आवाहन-स्नानजलादि-आरती-प्रणाम।

गन्धपुष्पे धूपदीपौ नैवेद्यः पञ्चते क्रमात्। (आन्हिक)

गंध-पुष्प-धूप-दीप-नैवेद्य

दस उपचार- पाद्य (चरण धोना) अर्घ्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, चंदन पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य।

दशोपचार-

अर्घ्यं पाद्यं चाचमनं स्नानं वस्त्र निवेदनम्।

गन्धोदयो नैवेद्यान्ता उपचाराः दश क्रमात्।। (आन्हिक)

अर्घ्य-पादप्रक्षालन-आचमन, स्नान, वस्त्र, गंध, पुष्प, धूप-दीप-नैवेद्य

सोलह उपचार- चरण धोना, अर्घ्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, गन्ध, पुष्प धूप, दीप, नैवेद्य, आचमन, तांबूल, दक्षिणा, इत्र, स्तुति नमस्कार।

षोडशोपचार-

आसनं स्वागतं चार्घ्यं पाद्यमाचमनीयकम्।

मधुपर्कार्पणं स्नानं वस्त्राभरणानि च।।

सुगंधः सुमनोधूपो दीपो नैवेद्य एव च।

माल्यानुलेपने चैव नमस्कारो विसर्जनम्।। (आन्हिक)

आसन, स्वागत, अर्घ्य, पाद्य, आचमन्

मधुपर्क, स्नान, वस्त्र, आभूषण, सुगंध, पुष्प

धूप-दीप-नैवेद्य-माला-नमन।

वाजसनेयी संहिता में षोडशोपचार –

आवाहन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान,
वस्त्र, यज्ञोपवीत, गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, दक्षिणा+तांबूल,
आरती+प्रदक्षिणा, पुष्पांजलि+नमस्कार।

देवताओं को अक्षत धोकर चढ़ावें –

देवताओं को अक्षत चढ़ाने के पूर्व अक्षतों को तीन बार धोना चाहिए तथा पितरों को चढ़ाने के लिये एक बार ही जल से धो लेना चाहिये।

त्रिर्देवेभ्यः प्रक्षालयेत् सकृत् पितृभ्यः।। (आपस्तंव गृहसूत्र)

देवताओं को अंगूठे से नहीं मलें – (मर्दन नहीं करें)

देवताओं को स्नानन्तर अथवा शुद्धि के लिये अंगूठे से नहीं मलना चाहिये। पुष्प को उल्टा करके नहीं चढ़ावें तथा कुशा के अग्रभाग से देवों पर जल नहीं छिड़के।

नाङ्गुष्ठैर्मर्दयेद्देवं नाधः पुष्पैः समर्चयेत्।
कुशाग्रैर्न क्षिपेत्तोयं वज्रपातसमं भवेत्।। (आचार मयूख)

देवताओं का निर्माल्य कैसे उतारें –

मूर्तियों के ऊपर चढ़े हुये पुष्प दूर्वा, वीलपत्र, को मूर्ति से उतारने को निर्माल्य कहते हैं। शिवजी, शालग्राम या अन्य मूर्ति पर से निर्माल्य को तर्जनी तथा अंगुष्ठ से उठाकर दूर करें। तर्जनी अंगूठे के पास वाली उंगली को बोलते हैं। मध्यमा और अनामिका से पुष्पार्पण देवताओं पर करना चाहिये।

मध्यमानामिका मध्ये पुष्पं संगृह्त्र पूजयेत्।
अंगुष्ठ तर्जन्याभ्यां निर्माल्यमप नोदयेत्।। (प्रयोग पारिजात–क्रियासार)

पूजा की सामग्री किस दिशा में रखें –

पूर्वाभिमुख बैठने वाले को अपनी बाईं ओर घण्टा और धूप बत्ती, दाहिनी

ओर शंख-जल पात्र तथा पूजन की सामग्री रखकर आचमन, प्राणायाम करके पूजा करें।

पूजा के समय मंत्र बोलें या नहीं

पूजा के समय ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य को यदि शुद्ध वेद मंत्रों का ज्ञान हो तो उच्चारण करें। नहीं तो पुराण के मंत्रों से पूजा करें। यदि वह भी नहीं है तो जिस देवता की पूजा है उसी का नाम जपता हुआ पूजा करें। बिना मंत्र के भी जल-चंदन-पुष्प चढ़ाकर पूजा करनी चाहिये।

अयं विनैव मंत्रेण पुण्यराशिः प्रकीर्तितः।

स्यादयं मन्त्र युक्तश्चेत् पुण्यं शतगुणोत्तरम्।। (पूजा प्रकाश)

पतला (तरल) चंदन नहीं लगावें - घृत नहीं लगावें-

देवताओं को तरल चंदन और घृत नहीं लगाना चाहिये। दीपक से दीपक जलाने से रोग और दरिद्रता मिलती है।

तरलं चन्दनं सर्पिर्न देवेषु विलेपयेत्।

दीपज्योतिर्हि दीपकाद्दारिद्रयं न पतेरुजम्।।

पुष्पार्पण फल -

भगवान् विष्णु को गोकर्ण, नागकर्ण तथा विल्पदल चढ़ाने से देवराज पद प्राप्त होता है।

गोकर्ण नागकर्णाभ्यां तथा विल्वदलेन च।

अर्चयित्वाऽच्युतं देवं देवानाभधियो भवेत्।। (विष्णु धर्मो.)

किस पुष्प चढ़ाने का क्या फल -

काश और कुश पुष्प हरि को अर्पण करने से विष्णु लोक प्राप्त होता है। **''काश कुशोद्भवैः''**

हरि को एक कमल पुष्प चढ़ाने से दस हजार वर्ष के किये पाप नष्ट होते हैं।

कमलेकेन दवैश योऽर्चयेत् कमला प्रियम्।
वर्षायुत सहस्रस्य पापस्य कुरुते क्षयम्।। (विष्णु रहस्य)

किस पुष्प का क्या फल –

श्वेत पुष्प चढ़ाने से सभी कामनाओं की प्राप्ति, पीले रंग के पुष्प चढ़ाने से समस्त ऐश्वर्य प्राप्त होता है, काले पुष्प चढ़ाने से शत्रुओं का पराभव, स्वर्ण पुष्प चढ़ाने से राजसूय यज्ञ फल की प्राप्ति होती है।

श्वेतैः पुष्पैः समभ्यर्च्य सर्वान् कमानवाप्नुयात्।
ऐश्वर्यं प्राप्नुयाल्लोके पीतैरेवं समचेयन्
शत्रूणामभिचारेषु तथा कृष्णैः समचेयन्।
सुवर्ण पुष्पदानेन राजसूयफलं लभेत्।। (विष्णु धर्मोत्तर पुराण)

भगवान् विष्णु को दूर्वा भी चढ़ा सकते हैं –

दूर्वाकुरं हरेर्यस्तु पूजाकाले प्रयच्छति।
पूजाफलं शतगुणं सम्यगाप्नोति मानवः।। (वीर मित्रोदय)

भगवान् विष्णु को दूर्वा चढ़ाने से सौ गुना पूजा का फल प्राप्त होता है। विष्णुजी को केतकी पुष्प, चम्पा पुष्प, कदम्ब पुष्प अशोक पुष्प, बन्धक पुष्प (दोपहरिया) और मालती–चमेली भी चढ़ा सकते हैं।

भगवान् विष्णु को विल्वपत्र–शमीपत्र–भृंगराज तथा तांबूल (पान) चढ़ाने से तुरन्त प्रसन्न हो जाते हैं।

विल्वपत्रं शमीपत्रं पत्रं भृंगराजस्य च।
तमालपत्रं च हरेः सद्यस्तुष्टिकरं परम्।। (वीर मित्रोदय) पूजा भाग

शयन में नहीं चढ़ाना चाहिये–

देवता के शयन काल में शमीपत्र–दूर्वा–भृंगराज नहीं चढ़ाना चाहिये।

शमीपत्राणि दूर्वाश्च भृंगराजस्तथैव च।
सुप्ते देवे न देयानि निद्राभंग कराणिवै।। (वीर मित्रोदय पूजा)

किस देवता को क्या प्रिय है –

कार्तवीर्य को दीपक प्रिय है। सूर्य को नमस्कार प्रिय है, विष्णु को स्तुति प्रिय है, गणेश को तर्पण प्रिय है, दुर्गा को पूजा प्रिय है और शिवजी को अभिषेक प्रिय है। (मन्त्र महोदधि 17/116)

श्री विष्णु को पुष्पार्पण फल –

एक सोने का कमल पुष्प बनाकर चढ़ाने से सभी पापों से मुक्त होकर शाश्वत गति प्राप्त कर लेता है।

एकं तु नलिनं स्वर्णपुष्पं कृत्वा समर्चयेत्।
सर्व पापा द्विनिर्मुक्तः शाश्वतीं गतिमाप्नुयात्।। (विष्णु रहस्य)

विष्णु को रत्न पुष्प से सिद्धि प्राप्ति, वस्त्रों के पुष्प बनाकर चढ़ाने से अभीष्ट कामना की पूर्ति होती है। शुष्क (सूखा) पुष्प, जला हुआ, कीड़ा लगा हुआ, आग से जला हुआ, पृथ्वी पर गिरा हुआ, पुराना बासा रखा हुआ, अविकसित जो खिला नहीं है, दुर्गन्धयुक्त, तीक्ष्ण गंध वाला पुष्प, गंधहीन पुष्प, श्मशान में लगा हुआ, चौराहे पर लगा हुआ पुष्प भी देवताओं को नहीं चढ़ाना चाहिये। (विष्णु रहस्य)

जहाँ विष्णु भगवान् को संकेतित किया है वहाँ शालग्राम-श्रीराम-श्रीकृष्ण-श्री नृसिंह आदि सभी को समझना चाहिये। विष्णु भगवान् को जो शमी (सैं) पत्र से पूजा करते हैं उनको यमलोक नहीं जाना पड़ता। दूर्वा चढ़ाने से सौ गुना फल, खैर का पुष्प, शमी पुष्प, वक (वनमल्ली) करवीर (कनेर) कुश पुष्प, अशोक माधवी लता, वासन्ती (अडूसा) गोजरा, मालती, कुन्द (कुन्दे का पुष्प) शतपत्र (दूर्वा, कमल, केसर) पुष्प, चम्पा, वासन्ती (अडूसा) गोजरा, मल्लिका (मोंगरा-बेला) जाती (चमेली) केतकी (केवड़ा) बकुल (मौलवी) कमल, पुन्नाग (जायफल) सदाबहार, कर्णिकार (अमलतास-चम्पा) के पुष्प

विष्णवादि देवताओं को चढ़ाना चाहिये। (नरसिंह पुराण, वीरमित्रोदय + अग्नि पुराण) तगर तथा जपा (अड़डुल) का पुष्प भी श्री विष्णु को चढ़ा सकते हैं। किन्तु वामन पुराण में जाती-कर्णिकार-अपराजिता (गिरिशालिनी) कुरज-जपा (अड़डुल) केतकी गोपालादि मूर्ति पर निषेध है। (वीरमित्रोदय 53/4)

केतकी पुष्प भगवान् विष्णु को चढ़ाने का अधिक महत्व है। किन्तु वीर मित्रोदय ने यहाँ केतकी का पत्र चढ़ाने का विरोध किया है। पृ. 52 वीर मित्रोदय भाग 4)

आम का पुष्प चढ़ाने का भी महत्व है। अकाव का पुष्प विष्णु भगवान् को चढ़ाना मना है। वांए हाथ से पुष्प तोड़ना मना है। वस्त्र में लाया हुआ, अरंड (अण्डी) के पत्र पर रखकर लाया हुआ अकौवा के पत्र पर रखा हुआ पुष्प भगवान् को चढ़ाना मना है। लाल रंग के पुष्प भी मना है। दुपहरिया पुष्प छोड़कर। कनेर तथा धतूर पुष्प भी चढ़ाना मना है विष्णुजी के लिये। (विष्णु धर्मोत्तर, वीर मित्रोदय पृ. 6भाग 4) विष्णु धर्मोत्तर में श्वेत-रक्त करवीर पुष्प नारायण को चढ़ाने का आदेश है। जपा (अड़डुल) का पुष्प नृसिंहजी को चढ़ सकता है। **तमालैश्चाच्युतं पूज्य नरः पापात्प्रमुच्यते।।** (वि.धर्मोत्तर) यहां तमाल पत्र का अर्थ तम्बाकू नहीं तमाल का अर्थ सदाबहार तथा तेजपात के पत्र चढ़ाने का संदेश है।

पुष्पों का पर्याय (अर्थ)

यूथिका = जुही
कुब्जक = सदा गुलाब
चम्पक = चम्पा
बकुल = मौलश्री
शतपत्र = दूर्वा-केसर-कमल
बक = वनमल्ली
मल्लिका = बेला-मोंगरा
कर्णिकार = चम्पा
मंदार= धतूरा-आक
द्रोणपुष्प = गूमा

शिवाक्ष = रुद्राक्ष
बृहती = कटाई
नद्यावर्त = तगर
कुन्द = कुन्दे का फूल
केतकी = केवड़ा
बन्धूक = दोपहरिया
सिन्दूर = सिन्दूरिया
जवा = गुड़हल
जपा = ओड़हुल-जासोन
हरश्रृंगार = हर सिंगार

अगस्त = अगस्तुआ
पद्मबीज = कमल गट्टा
कुमुद = कोई
वक = अगस्त का पुष्प
मालती = जायफल
वासन्ती = अडूसा
तमाल = तेजपात, सदाबहार
पुन्नाग = सदाबहार
करवीर = कनेर
कर्णिकार = अमलतास
गोकर्ण = अपराजिता
नागकर्ण = एरण्डी (अंडी)
बन्धुजीव = गुलदुपहरिया
जाती = चमेली, मालती
सहकार = आम
कर्णिकार = चमेली तथा अमलतास।

शिव पूजा के योग्य पुष्प –

शिव पूजा में भी अकाव (अर्क) कनेर, अपामार्ग (चिटचिड़ा) कुश पुष्प-शमीपत्र, धतूर, कमल, अगस्त का पुष्प, चमेली-गुलाब-मन्दार (धतूरा, आक) सदाबहार, शमी पुष्प, कटाई, उशीर, तगर, नागकेसर, शिंशिपा, ऊमर, जया, विल्वपत्र, मालती, नागकेसर के पुष्प अर्पित करना चाहिये। शिवजी को कदम्ब-केतकी-शिरीष-मौलवी-कपास-कैथ-दुपहरिया (बन्धूक) के पुष्प शिवजी को नहीं चढ़ाना चाहिये। तुलसी भी शिवजी को चढ़ानी चाहिये।

(स्कन्द पु. भविष्य पु. वीर मित्रो. पूजा प्रकाश पृ. 211-217 भाग 4)

एक धतूरा पुष्प चढ़ाने से लाख गोदान का फल प्राप्त होता है।

धत्तूरेकेण योलिंगं सकृत्पूजयते नरः।

स गोलक्ष फलं प्राप्य शिवलोके महीयते।। (नारद पु.)

सूखा वीलपत्र भी चढ़ सकता है –

शिवजी को विल्व पत्र सूखा भी चढ़ सकता है।

शुष्काण्यपि च पत्राणि श्रीवृक्षस्य निवेदयेत्।

(स्कन्द पु. निर्णय पृ. 506)

श्री विष्णु को भी विल्वपत्र चढ़ा सकते हैं –

यदि राम-कृष्ण या नारायण को विल्व पत्र पूजा करे तो वह मुक्ति का अधिकारी होता है

सकृदम्यर्च्य गोविन्दं विल्वपत्रेण मानवः।

मुक्ति भागी निरातंकः कृष्णास्यानुचरो भवेत्।।

(वीर मित्रादय पूजा भाग)

वासा तथा चढ़ाया हुआ विल्वपत्र भी चढ़ा सकते हैं–

यदि विल्वपत्र का सर्वथा अभाव हो तो चढ़ाया हुआ विल्वपत्र धोकर पुनः चढ़ा सकते हैं।

अर्पितान्यानि विल्वानि प्रक्षाल्यापि पुनः पुनः।

शंकरायार्यनीयानि न नवानि यदि क्वचित्।।

(स्कन्द पु. आचरेन्दु पृ. 165)

सूर्य गणेश को भी विल्वपत्र निषेध –

यद्यपि विल्वपत्र समर्पण में सूर्य के अतिरिक्त सभी देवताओं को विल्वपत्र चढ़ा सकते हैं। किन्तु यज्ञ गणपति पूजा विधान में गणेश जी को विल्वपत्र

चढ़ाने का क्रम नहीं लिखा है। आन्हिक कर्म सूत्रावली में भी संकेत है कि सूर्य गणेश के बिना सभी को विल्वपत्र चढ़ावे।

षणासानन्तरं विल्वपत्रं पर्युषितं भवेत्।

पूज्या एतेन वै देवाः सूर्य लम्बोदरौ विना।। (आहिन्क पृ. 160)

कौन सा पुष्प किसे न चढ़ावें –

शिवजी को कुन्द, केतकी, चम्पा तथा विष्णुजी को धतूरा देवी को मदार-आक और सूर्य को तगर का पुष्प नहीं चढ़ावें।

शिवे विवर्जयेत कुन्दमुन्मत्तं च तथा हरौ।

देवीनामर्क मन्दारौ सूर्यस्य तगरं तथा।। (आन्हिक)

सूर्य को विहित पुष्प –

सूर्य भगवान् को कनेर–अकाव जपा (गुड़हल) कमल–अगस्त, कुश, शमी पुष्प श्वेत मंदार–नागकेसर–चम्पा, कदम्ब, चमेली, दूर्वा, कुश, अशोक–भृंगराज पत्र–तमाल (सदाबहार) का पत्र केतकी, तुलसी, रक्त चंदन, सूर्य को अति प्रिय हैं। (भविष्य पुराण)

दुर्गा पूजा में पुष्प –

दुर्गाजी की पूजा में चमेली, बेला, कुब्जक (सदा गुलाब) कमल, मौलश्री, अकाव, कुश की मंजरी, विल्वपत्र, केतकी, बन्धूक (दुपहरिया) कनेर, कदम्ब, चम्पा, जायफल, सदाबहार, तगर, अर्जुन मल्ली, कटाई पुष्पों की प्रशस्ति मान्य है।

(देवी भागवत् पु. भविष्य पु. वीरमित्रो. पूजा प्रकाश पृ. 314–317)

देवी पूजा में दूर्वा चढ़ाने का निषेध शास्त्रों में वर्जित है। यद्यपि देवी को जपा (जायसोन) पुष्प का भी महत्त्व है। किन्तु वीरमित्रोदयादि ग्रंथों में वर्णन अनुलपब्ध है। देवी पुराण में कोमल दूर्वा का चढ़ाने का संकेत है।

लताभिर्ब्रह्म वृक्षक्य दूर्वाङ्कुरैः सकोमलैः ।। (देवी पुराण)

धतूरे तथा अकाव का पुष्प दुर्गाजी को चढ़ सकता है, किन्तु अन्य देवियों को चढ़ाना मना है।

ग्रहणकाल तथा आशौच में –

ग्रहणकाल की सूतक आरंभ होने से ग्रहण समाप्ति किसी मूर्ति का स्पर्श-पूजा नहीं करें। पश्चात् स्नानादि से पवित्र होकर देव पूजा करें। बालक के जन्म काल तथा मरण काल में भी दश दिन तक मूर्ति के स्पर्श तथा पूजन का विधान नहीं है। (निर्णय पु. सिन्धु धर्म सिन्धु)

दूर्वा–तुलसी पत्र कैसे चढ़ावें –

दूर्वा तथा तुलसी पत्र चढ़ाते समय अपनी ओर उसका अग्रभाग रहे। डंठल पीछे की ओर रखें

"दूर्वा स्वाभिमुखाग्राः" (तृच भास्कर)

तुलस्यादि पत्रं आत्माभिमुखं न्युब्जमेव समर्पणीयम् ।।

(प्रतिष्ठा सार दीपिका)

पुष्पादि मंत्र बोलकर चढ़ाने में शतगुणित फल–

वेद मंत्रों से देवता पर वस्तु अर्पण करने का सौ गुना फल प्राप्त होता है। वेद मंत्र न हो तो पुराणोक्त मंत्र वे भी न होवें तो बिना मंत्र के ही जल चंदन से पूजा करें, पर अवश्य करें।

अयं बिनैव मंत्रेण पुण्य राशिः प्रकीर्तितः ।

स्यादयं मंत्रयुक्तश्चेत् पूज्यं शतगुणोत्तरम् ।।

(देव पूजा प्रकाश पृ. 113)

किसको क्या न चढ़ावें तथा कैसे चढ़ावें –

लक्ष्मी की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को सिरस, धतूरा, मातुलुंगी, मालती,

सेमल, मदार और कनेर के फूलों से तथा अक्षतों के द्वारा विष्णु की पूजा नहीं करनी चाहिये। तथा पलाश, कुन्द, सिरस, जूही, मालती और चंपा तथा केवड़े के पुष्पों से शिवजी की पूजा नहीं होती शिवजी को चंपा पुष्प भी नहीं चढ़ाते। "**चंपकं केतकं हित्वा**" (शिव पुराण) दूर्वा से दुर्गा की, अगस्त्य के पुष्पों से सूर्य की पूजा नहीं करनी चाहिये। (पद्म पुराण उत्तर 92/25-27) केतकी, कुटज, कुन्द, बन्धूक (दुपहरिया) नागकेसर, जपा तथा मालती ये भी शिवजी को नहीं चढ़ाना चाहिये। (नारद पु. 67/61) मातुलिंग (विजौरा नींबू) और तगर कभी सूर्य को नहीं चढ़ावे। दूर्वा-आक और मदार ये दुर्गा को अर्पण नहीं करें। पलाश, कास के फूलों से तथा तमाल, तुलसी, आंवला और दूर्वा से दुर्गा की पूजा नहीं करें। गणेश पूजा में तुलसी निषेध है।

केतकीं कुटजं कुन्दं बन्धूकं केसरं जपाम्।
मालती पुष्पकं चैव नार्पयेत्तु महेश्वरे।
मातुलिंगं च तगरं रवौ नैवार्पयेत्क्वचित्।
शक्तौ दूर्वार्कमन्दारान् गणेशे तुलसी त्यजेत्।।
पलाश काश कुसुमैस्तमाल तुलसीदलैः।
धात्री दलैश्च दूर्वाभिर्नाक्योज्जगदम्बिकाम्।। (नारद 67/6)

पत्र पुष्प और फल देवता पर अधोमुख (उल्टा मुख) करके नहीं चढ़ावे। पत्र पुष्प जिस रूप में होते हैं उसी रूप में चढ़ावे, किन्तु विल्वपत्र उल्टा चढ़ावे।

यथोत्पन्नं तथा देयं विल्वपत्रमधो मुखम्।।
नार्पयेत्कुसुमं पत्रं फलं देवे ह्यधोमुखम्।
पत्र पुष्पादिकं विप्र यथोत्पन्नं तथार्पयेत्।। (नारद पूर्व. 67/7)

सूखे पत्ते तथा पुष्पों से देव पूजा न करे। आंवला, खैर, विल्व और तमाल

के पत्र आदि छिन्न-भिन्न हों तो भी वह दूषित नहीं होते। कमल तीन दिन तक शुद्ध रहता है, विल्वपत्र सदा शुद्ध है। (नारद पु. पूर्व 67/66-68)

स्नान के पश्चात् पुष्प नहीं तोड़ें -

स्नान करने के पश्चात् पुष्पों को नहीं तोड़ना चाहिये। वे पुष्प देवताओं के योग्य नहीं रहते।

स्नात्वा पुष्पं न गृह्णीयात् देवायोग्यन्तदीरितम् (अग्नि पु. 166/19)

स्नान के पश्चात् पुष्प तोड़ने का निषेध ही है।

स्नानं कृत्वा तु यत्किञ्यित् पुष्पं गृह्णन्ति वै द्विजाः।
पितरस्तन्न गृहन्ति न गृहणन्ति च देवताः।। (आन्हिक कर्म)

वस्त्र में बाधा हुआ, हाथ में लाकर दिया हुआ, स्वयं गिरा हुआ, एरण्ड के पत्र में रखा हुआ पुष्प देवता को चढ़ाने से लाभ नहीं होता।

(आन्हिक पृ. 161)

विल्वपत्र कैसा रखें गांठ सहित या निर्ग्रन्थ -

शिवजी को विल्वपत्र चढ़ाने में डंठल तोड़कर ही चढ़ाना चाहिये।

वृन्तच्छिन्नं विल्पपत्रं शिवाय तु समर्ययेत्।
वृन्तच्छिन्न पत्रं तु सूर्याय च समर्पणम्।। (सनातन धर्म मार्तण्ड)
विल्वपत्रस्य प्लवनं दण्डं हित्वा तु प्लावयेत्।
वृन्तसंप्लावनादेव सिद्धिं हरति राक्षसः।
प्लावयेदर्पयेदित्यर्थः (आन्हिक कर्म सूत्रावली पृ. 247 कर्त्तव्य निर्देश)

यहां भी यही निर्देशित किया कि दण्ड (डंठल) तोड़कर ही शिवजी को विल्वपत्र अर्पण करना चाहिये।

निषिद्धं पुष्प -

जो पुष्प एक बार भगवान् पर चढ़ चुका हो, सूंघा हुआ, अपने शरीर में

लगाया हुआ, अपवित्र स्थान पर रखा हुआ हो, आग से झुलस गया हो, कीड़ा से विद्ध हो, असुन्दर हो, पंखुड़ी बिखर गई हो, पृथ्वी पर गिर गया हो, पूरा न खिला हो, सड़ गया हो, दुर्गन्ध दे रहा हो, बिना सुगंध का हो, पहिने हुये कपड़े पर रखकर लाया हो, ऐसे फूल नहीं चढ़ाना चाहिये। पुष्पों की कलियाँ नहीं चढ़ाना चाहिये, परंतु कमल की पंखुड़ी चढ़ा सकते हैं। (स्मृति सारावली)

दूर्वा कैसे चढ़ावें –

दूर्वा का अग्रभाग अपनी ओर (पूजा करने वाले) की ओर होना चाहिये। तुलसी दल भी अपनी ओर ही होना चाहिये। (अर्थात् तुलसी के पत्र की नोक अपनी ओर रहे।

दूर्वाः स्वाभिमुखाग्राः (तृचभास्कर)

तुलस्यादिपत्रं अस्माभिमुखं न्युब्जमेव समर्पणीयम्

(प्रतिष्ठा सार दीपिका)

पुष्प कैसे चढ़ावें –

दाहिने हाथ की हथेली ऊपर की ओर रहे तथा मध्यमा अनामिका का और अंगूठे की सहायता से पुष्प चढ़ाना चाहिये।

मध्यमानामिकांगुष्ठैः पुष्पं सुग्रह्य पूजयेत्।। (चिन्तामणि)

विल्वपत्र भी ऐसे ही चढ़ावे।

परंतु पुष्प का मुख ऊपर तथा विल्वपत्र उल्टा नीचे की ओर उसका चिकना भाग रहे। अर्थात् अधोमुख चढ़ावे।

विल्वपत्र पुष्प कैसे उतारें –

देवता को चढ़े हुये पुष्प विल्वपत्र दूर्वा आदि अंगूठा तथा तर्जनी उंगली के माध्यम से उतारें।

अङ्गुष्ठ तर्जनीभ्यांतु निर्माल्यमपनोदयेत्।। (कालिका पुराण)

पुष्प की अशुद्धि– शरीर में पहिने वस्त्र में या धोती में या जल में डुबाया हुआ पुष्प अपवित्र है, वह देवता पर चढ़ने योग्य नहीं है। (आन्हिक)

देवता को पान कैसे चढ़ावें –

पान का डंठल सहित देवार्पण करने से व्याधि आती है और उसकी नोक सहित चढ़ाने से पाप होता है। अतः डंठल तथा नोक तोड़कर चढ़ाना चाहिये तथा खाते समय भी डंठल–नोक तोड़ देवें। सड़ा हुआ पान देवता को चढ़ाने से आयु और बुद्धि दोनों नष्ट हो जाती है।

पर्णमूले भवेद् व्याधिः पर्णाग्रे पापसंभवः।

जीर्णपत्रं हरत्यायुः शिरा बुद्धिर्विनाशिनी।। (आचारार्क)

(नैवेद्य) भगवान् को इन वस्तुओं का भोग नहीं लगावें–

भैंस का दूध–दही–घी तथा बकरी का दूध–दही घी का नैवेद्य नहीं लगावें।

माहिषं चाविकं छागमयज्ञियमुदाहृतम्।। (वाराह पुराण)

इसी न्याय से जरसी गाय का भी दूध–दधि घृतादि सर्वथा वर्जित है, वह तो सांकर्य दोष युक्त शूकर के संकरीकरण से सर्वथा अविहित है। मानवमात्र को उसका वहिष्कार करना चाहिये और देवताओं के भोज की क्या बात है मनुष्यों को भी ग्रहण करना मना है।

भटा–गोभी–कद्दू–कूष्माण्ड–मूली–लशुन–प्याज–लोकी–मसूर–गाजर इनको भी न भगवान का निवेदन करे तथा न ही उसका भक्षण करे। आजकल तो भक्त चाय–काफी–गांजा–भांग–अफीम तक का भोग लगाते देखे जाते

हैं। दुर्गन्धयुक्त-सड़ा-अपक्व-वासा भोजन भगवान् के नैवेद्य योग्य नहीं है।

वृन्ताकं जालिका शाकं कुसुम्भान् मालकं तथा।
पलाण्डुँ लशुनं शुक्तं निष्पावं चैव वर्जयेत्।।
अतिपक्वमक्वं च सुपक्वं कृमिसंयुतम्।
दुर्भाण्डस्थमसद्यस्कं दुर्गन्धिं न शुभं स्मृतम्।।

(वाराह पु कूर्म पु. वीरमित्रोदय पूजाप्रकाश पृ. 81)

वासा भोग नहीं लगावें -

भगवान् को मिष्ठान्न के अतिरिक्त पकवान का भोग दूसरे दिन नहीं लगाना चाहिये। जिन मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा हुई उनको नित्य अन्न का भोग आवश्यक है। सायंकाल में दुग्धादि-मिष्ठान्न का भोग लग सकता है। जिस भंडार में जनों ने पूर्व में पा लिया हो, उस अन्न का भोग देवताओं को लगाना मना है। सभी शबरी बनने का प्रयास नहीं करें। शबरी ने ''**सम्परीक्ष्य परिभक्ष्ययच**'' (पद्म पुराण) में पूर्व भक्षण परीक्षार्थ किया था। किन्तु वह हमारे लिये संभव नहीं। चाय-काफी-गांजा-भांग-भटा-लोकी-पालक-गाजर-मुनगा-गोभी-कपित्थ-लशुन-प्याज-डालडा-मसूर और अन्य तमोगुणी द्रव्यों को भगवान् को अर्पण नहीं करें। हो सके तो भैंस का दूध-दही-घृत देवों तथा पितरों को नहीं अर्पित करें (माहिस्यादि वर्जनम्)-(विष्णु पुराण) श्राद्ध की तेरहवीं आदि का भोग भी ग्राम देवताओं मंदिरों में अर्पित नहीं करें। गृह देवताओं को गौओं को खिलाने के पश्चात् भोग लगा सकते हैं।

गाय का भी दश दिन तक का दूध भगवान् को अर्पित नहीं करें और न ही स्वयं भक्षण करें (देखें वैदिक गो महत्व मीमांसा) जिस घर में जननाशौच (जन्म की सूतक) होती है उस घर में रहने वाली कन्या-बहिन-बुआ सभी

को सूतक लग जाता है उनके हाथ से गृह देवताओं की पूजा तथा योग नहीं कराना चाहिये।

शिव नैवेद्य भक्षण-शिव निर्माल्य -

भगवान् शंकर के अभिषेक का जल तथा चढ़ाया हुआ फूल-बीलपत्र को लाँघने वाले व्यक्ति को पुण्य नष्ट होता है। लांघने वाले को दश हजार अघोर मंत्र से शुद्धि होती है। शिवजी के ऊपर जिलहरी पर चढ़ा हुआ नैवेद्य-जल-फल ग्रहण नहीं करना चाहिये। वहाँ चण्ड नाम के गण का अधिकार है। अत: जल में विसर्जित करे। शालग्राम शिला से निर्मित शिवलिंग, वाण लिंग, स्वयं प्रकट शिवलिंग, ऋषि या देवता से स्थापित शिवलिंग मणि, स्वर्ण-चांदी से निर्मित शिवलिंग का ज्योर्तिलिंग का निर्माल्य चरणोदक ग्रहण कर सकते हैं इन शिवलिंगों में चंड नामक गण का अधिकार नहीं होता। शिवप्रतिमा में भी निर्माल्य लेने का दोष नहीं है। जो विधिपूर्वक शिवलिंग को स्नान कराकर वह जलपान करता है उसका तीनों प्रकार का पाप तुरन्त नष्ट होता है। जो शिवलिंग निर्माल्य जल को शिर पर छिड़कता है उसे गंगास्नान का पुण्य प्राप्त होता है। (स्कन्द, काशी खंड)

यत्र चंडाधिकारोऽस्ति तद्भोक्तव्यं न मानवैः।।

प्रतिमासु च सर्वासु न चण्डोऽधिकृतो भवेत्।।

शिव नैवेद्य भक्षण में अति पुण्य -

शालग्राम शिला निर्मित शिवलिंग, पारदेश्वर, स्वर्ण-चांदी से निर्मित लिंग, स्फटिक शिवलिंग, ज्योर्तिलिंग के नैवेद्य में अन्य शिवलिंगों की अपेक्षा कोटि गुणित पुण्य, प्राप्त होता है।

चान्द्रायण समं प्रोक्तं शंभोनैवेद्य भक्षणम्।।

(सनातुन धर्म. पृ. 327)

देवता को पान चढ़ाना -

पान के अग्रभाग में दारिद्रय पत्नी के साथ तथा पान के डंटल में दारिद्रय पुत्र के साथ निवास करता है। रात्रि के समय ये तीनों कत्था में निवास करते हैं। सुरती (तंबाकू) जर्दा में दारिद्रय पुत्र पत्नी के साथ सदा निवास करता है। अतः पान की नोक तथा डंठल दोनों तोड़कर बिना सुरती के केवल दिन में देवता को समर्पित करना चाहिये।

चूर्ण पत्रे त्वया वासः सदा कार्यो दरिद्र भोः।
ताम्बूलस्य तु पर्णाग्रे भार्यया मम वाक्यतः।।
पर्णानां चैव वृन्तेषु सर्वेषु त्वत्सुतेन च।
रात्रौ खदिरसारे च त्वं ताभ्यां सर्वरा वस।। (स्कंद नागर 210/74-75)

वस्त्र-यज्ञोपवीत और आभूषण को पुनः चढ़ा सकते हैं-

देवता को अर्पित किये गये वस्त्र-यज्ञोपवीत तथा आभूषण पुनः पुनः चढ़ाये जा सकते हैं।

न निर्माल्यं भवेद् वस्त्रं स्वर्णरत्नादि भूषणम्।।

(तत्त्वसागर संहिता) (आचार रत्न)

अपवित्र स्थान में उत्पन्न वृक्षों के पत्र-पुष्प लिये जा सकते हैं-

यदि देवोपयोगी पुष्पों के वृक्ष अपवित्र स्थान में उगे हों तो उनको भी ग्रहण में दोष नहीं है।

अमेध्येषु च ये वृक्षा उप्ताः पुष्पफलोगमा।
तेषामपि न दुष्यन्ति पुष्पाणि च फलानि च।।

(बौधायन धर्मशास्त्र 1/6/9/4) (बौधयन स्मृति 1/5/59)

पूजा में शंख ध्वनि -

शंख ध्वनि से भूत-प्रेतात्मा दूर भागते हैं

शङ्खेन हत्वा रक्षांसि। (अथर्व 4/10/2)

शंख ध्वनि से शत्रुओं का शमन-पराजय भी होती है।

अवरस्पराय शंखध्वम् (यजुर्वेद 30/19)

शंख ध्वनि से शत्रुओं का दमन होता है।

यस्तु शंखध्वनिं कुर्यात्पूजाकाले विशेषतः।
विमुक्तः सर्वपापेन विष्णुना सहमोदते।।

शंख ध्वनि से संपूर्ण पाप नष्ट होते हैं और वह भगवान् के साथ आनंद करता है। महाभारत तथा धर्म शास्त्र में स्त्री तथा शूद्र के द्वारा शंख ध्वनि करना निषेध किया गया है। स्त्री की शंख ध्वनि से गर्भाशय पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

आरती –

जिस देवता की आरती करें उसी देव के बीज मंत्राकृति में आरती घुमाना चाहिये। यदि नहीं तो ओंकार स्वरूप में आरती करें। जिससे ॐ की वर्णाकृति बन जावे। भगवान् विष्णु की बारह बार, सूर्य की सात बार, दुर्गा की नौ बार, शिवजी की बारह बार, गणेश जी की चार बार, रामजी की नौ बार, कृष्णजी की आठ बार, अथवा सभी देवताओं की आरती चरणों में चार बार नाभि में दो बार मुख पर एक बार।

(सनातन धर्म मार्तण्ड पृ. 306)

जो आरती का दर्शन करते तथा आरती की लौ पर हाथ घुमाकर-अपने मुख या शरीर पर लगाते हैं उससे उनको लाख यज्ञ करने का लाख बार अवभृय स्नान करने का पुण्य प्राप्त होता है।

नीराजन बलिर्विष्णोर्यस्य गात्राणि संस्पृशेत्।
यज्ञलक्ष सहस्राणां लभते स्नानजं फलम्।। (भविष्य पुराण)

शंख जल का महत्व –

भगवान् के ऊपर शंखजल घुमाकर छिड़क देने से जिन पर वह जल गिरता है, उसकी ब्रह्म हत्या का शमन होता है।

शंखमध्ये स्थितं तोयं भ्रामितं केशवोपरि।

अंगलग्नं मनुष्याणां ब्रह्महत्या व्यपोहति।। (आन्हिक कर्म)

बलिवैश्वदेव के पश्चात् भगवान् को भोग लगावें –

जब तक बलिवैश्वादि (गो ग्रास) न होवे तब तक भोजन नैवेद्य भगवान् को अर्पित नहीं करना चाहिये क्यों कि वैश्वदेव के पूर्व अन्न अशुद्ध है। बिना बलिवैश्वदेव के भोजन करने में भी दोष है। (स्मृति)

अकृत्वा वैश्वदेवं तु भुंजते ये द्विजाधमाः।

सर्वे ने निष्फला ज्ञेयाः पतन्ति नरकेऽशुचौ।। (पाराशर स्मृति)

बिना गोग्रास के भोजन में नरक प्राप्ति है।

किस मंदिर में क्या न बजावे –

शिव मंदिर में मल्लक सूर्य मंदिर में शंख, दुर्गा मंदिर में वंशी तथा वीणा न बजावे। (योगिनी तंत्र, निर्णयसि. पृ. 506)

शिवागारे मल्लकं च सूर्यागारे च शंखकम्।

दुर्गागारे वंशवाद्यं मधूरीं न च वादयेत्।।

देवताओं की कितनी परिक्रमा –

भगवान् विष्णु, रामजी-कृष्णजी-नृसिंहजी-दत्तात्रेयजी, वामनजी की चार परिक्रमा, शिवजी आधी परिक्रमा, देवी की एक, सूर्य की सात, गणेशजी की तीन परिक्रमा करनी चाहिये।

देव्याः प्रदक्षिणामेकां सप्त सूर्यस्य भूमिप।

तिस्रो विनायकस्यापि चतस्रो विष्णु मंदिरे। (नारद पु. 76/115)

विष्णु सोमाऽर्क विघ्नानां वेदार्धेद्वंद्विवन्ध्य: ।। (नारद पु. 13/136)

इसी प्रकार श्री हनुमानजी की भी वैष्णव देवता होने के कारण चार परिक्रमा ही करनी चाहिये। परिक्रमा करते समय मौन रहे, एक परिक्रमा पूरी होने पर एक निमेष (सैकेन्ड) रुके, मानसिक प्रणाम करे पुन: दूसरी परिक्रमा आरंभ करे। इसी क्रम में परिक्रमा करनी चाहिये।

एक परिक्रमा नहीं करें–

देवी तथा गणपति को छोड़कर किसी भी देवता की एक परिक्रमा शुभ नहीं होती है। एक हाथ से प्रणाम करना तथा एक परिक्रमा वर्जित है किन्तु स्कन्द पुराण में लिखा है कि भक्तिपूर्वक की हुई एक प्रदक्षिणा भी शुभ है उससे एक दिन के पाप नाश हो जाते हैं। तीन प्रदक्षिणा से सात दिन के पाप नाश। 21 परिक्रमा से महापाप नाश 108प्रदक्षिणा से अश्वमेघ यज्ञ फल प्राप्ति। दस प्रदक्षिणा से सभी यज्ञों का फल प्राप्त हो जाता है। (4/7/21/11/108)1000 तथा एक लाख प्रदक्षिणा करने का विधान भी शास्त्रों में वर्णित है। (स्कन्द पुराण) परिक्रमा करते समय छाता जूता-पादुका नहीं पहिनें। (सनातन पृ. 321)

चण्डी विनायकौ हित्वा नैका प्रदक्षिणा शुभा।
एका प्रदक्षिणान्येषां नैकहस्ताभिवादनम्।। (हलायुध)

साष्टांग प्रणाम –

भगवान् को साष्टांग प्रणाम करना चाहिये। हृदय से, सिर से, दृष्टि से, मन से, वाणी से, हाथ-पैर तथा घुटने पृथ्वी में लगाकर प्रणाम करना साष्टांग प्रणाम होता है।

उरसा शिरसा दृष्ट्या मनसा वचसा तथा।
पदभ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोऽष्टांग उच्यते।।

स्त्री को साष्टांग प्रणाम नहीं करना चाहिये -

स्त्रियों को साष्टांग प्रणाम (पृथ्वी पर गिर कर) नहीं करना चाहिये। उनको शिर-कमर-गर्दन झुकाकर प्रणाम करने की ही शास्त्राज्ञा है। नर्मदा आदि तीर्थों में सर भर कर स्त्री को नहीं जाना चाहिये। पुरुष जा सकते हैं।

एक हाथ से प्रणाम नहीं -

देवता-महात्मा तथा प्रणम्य जनों को एक हाथ से प्रणाम नहीं करना चाहिये अन्यथा जीवन भर का पुण्य नष्ट हो जाता है।

जन्मप्रभृति यत्किञ्चित् सुकृतं समुपार्जितम्।
तत्सर्वं निष्फलं याति एकहस्ताभिवादनात्।। (व्याघ्रपाद. 367)

देव प्रतिमा को प्रणाम आवश्यक -

कहीं भी मंदिर देव प्रतिमा देखकर त्रिदण्डी तथा संत को देखकर प्रणाम अवश्य करना चाहिये। अन्यथा प्रायश्चित्त (पाप) का भागी होता है।

देव प्रतिमां दृष्टवा यतिं दृष्टवा त्रिदण्डिनम्।
नमस्कारं न कुर्वीत प्रायश्चित्ती भवेन्नरः।। (व्याघ्रपाद स्मृति 366)

किस देवता से याचना -

सूर्य से आरोग्य, अग्नि से श्री, शिव से ज्ञान, विष्णु से मोक्ष, दुर्गा से रक्षा, भैरव से कठिनाई पार करना, सरस्वती से विद्या, लक्ष्मी से ऐश्वर्य वृद्धि, पार्वती से सौभाग्य की, शनि से मंगलवृद्धि की, स्कन्द से सन्तान वृद्धि की और गणेशजी से सभी वस्तुओं की इच्छा याचना करना चाहिये।

आरोग्यं भास्करादिच्छेच्छ्रिमिच्छे द्धुताशनात्।
ईश्वराज्ज्ञानमिच्छेत् मोक्षमिच्छेज्जनार्दनात्।।
दुर्गादिभिस्तथा रक्षां भैरवाद्यैस्तु दुर्गमम्।
विद्यासारं सरस्वत्या लक्ष्म्या चैश्वर्यवर्धनम्।

पार्वत्या चैव सौभाग्यं शच्या कल्याण सन्ततिम्।
स्कन्दात् प्रजाभिर्वृद्धि च सर्वं चैव गणाधिपात्।। (लौगाक्षि स्मृति)

देवता पर से पुष्प उतारना –

सायंकाल आरती के समय भगवान् पर से पुष्प उतार देना चाहिये।

भगवान् की सेवा में बत्तीस अपराध –

इन अपराधों के होने पर देव कृपा से व्यक्ति वंचित हो जाता है। एतावता इनसे बचना चाहिये।

1. भगवान् के मंदिर में जूता–मोजा पहिन कर जाना।
2. रथयात्रा, जन्माष्टमी, रामनवमी आदि उत्सवों में सम्मिलित न होना तथा भगवान् के दर्शन नहीं करना।
3. भगवान् के समक्ष पहुँचकर उनको प्रणाम न करना।
4. अपवित्र अवस्था में भगवान् के दर्शन करना।
5. एक हाथ से प्रभु को प्रणाम करना।
6. भगवान् के समक्ष एक ही स्थान पर खड़े–खड़े परिक्रमा करना।
7. भगवान् के आगे पैर फैलाकर बैठना।
8. भगवान् के समक्ष खाट या पलंग पर बैठना।
9. भगवान् के समक्ष सो जाना।
10. भगवान् के सामने भोजन करना।
11. भगवान् के सामने मिथ्या भाषण करना।
12. भगवान् के समक्ष जोर–जोर से बोलना।
13. परस्पर बातचीत करना।

14. भगवान् के समक्ष रोना-चिल्लाना।
15. भगवान् के समक्ष विवाद करना।
16. भगवान् के सामने किसी को दंड देना।
17. भगवान् के सामने किसी पर कृपा करना।
18. भगवान् के सामने स्त्रियों से रागपूर्ण व्यवहार करना।
19. भगवान् के सामने कम्बल ओढ़ना।
20. भगवान् के सामने दूसरों की निन्दा करना।
21. भगवान् के सामने दूसरों की प्रशंसा करना।
22. भगवान् के सामने अपशब्द-गाली देना।
23. भगवान् के सामने अधो वायु छोड़ना।
24. शक्ति रहते भी पूजा में कृपणता करना 'सामान्य उपचारों से पूज करना'
25. भगवान् को बिना अर्पण किये कुछ खा लेना।
26. ऋतु का प्रथम फल भगवान् को अर्पण किये बिना खा लेना।
27. उपयोग से बची वस्तु भगवान् को चढ़ाना।
28. भगवान् को पीठ देकर बैठना।
29. भगवान् के समक्ष किसी दूसरे को प्रणाम करना।
30. गुरु का अभिवादन नहीं करना।
31. अपने मुख से अपनी प्रशंसा करना।
32. किसी भी देवता की निन्दा करना।

(पद्म पुराण पाताल 79/36-44)

भोग तथा मूर्ति स्पर्श में निषेध –

अंधेरी रात्रि में बिना दीप जलाये, श्मशान भूमि से लौटकर, (श्मशान में जाने वाले को भी एक दिन रात्रि का सूतक रहता है, अतः पूजा करने वाले पुजारी या अन्य गृहस्थ भगवान की मूर्ति का स्पर्श दूसरे दिन स्नान कर, यज्ञापवीत परिवर्तित करके ही मूर्ति स्पर्श-पूजन करें। बिना यज्ञोपवीत वालों को मूर्त्ति स्पर्श नहीं करना चाहिये। प्रायः नियम है कि गांव के सभी लोग शहरों के भी सभी नर नारी मंदिरों में जाकर मूर्त्तियों को छूने में ही अपना सौभाग्य मानते हैं। उनकी यह धारणा निरर्थक है। मंदिर में भगवान् के दर्शन करें तथा मानसिक भाव से ही प्रणाम पूजन श्रेष्ठ है। मूर्त्ति से लिपटने की आवश्यकता नहीं है। लोग भोग लगाने जाते हैं तो मूर्त्तियों के मुख में मिठाई लगाते हैं, उससे मूर्त्ति विकृत हो जाती है। पुजारी से ही भोग लगवाना चाहिये। पुजारी न हो तो दूर से ही नैवेद्य निवेदन करना चाहिये। जिनके घर में अन्त्येष्टि श्राद्ध (मृत्युभोज) होता है, वे प्रथम थाल लगाकर मंदिरों में भेजते हैं। ऐसा नहीं करना चाहिये। प्रथम भोजन भारतीय गायों को खिलावें, पुनः गृह देवताओं को अर्पित कर विप्र भोज आदि आरंभ कर देना चाहिये। मंदिरों में मृत्यु भोज के थाल, दूषित बने व्यंजन, डालडा आदि अपवित्र अज्ञात भोज लगाना भी मना है। भारतीय देशी गाय के घृत से बनाया हुआ नैवेद्य-मिष्ठान ही भगवान् को अर्पित करना चाहिये, किन्तु आजकल तो 'सर्व डाल्डा मयं जगत्' चल रहा है। परम पूज्य श्री राजेन्द्र दास जी महाराज मलूक पीठाधीश्वर वृन्दावन बार-बार आग्रह कर रहे हैं कि देवताओं को गोव्रती रखा जावे। अर्थात् देशी गाय के दूध-दही-घी-छाछ से निर्मित

पदार्थ ही भगवान् को चढ़ावें। दूषित पदार्थों के भोग से देवत्व न्यून होता है। मूर्त्तियों का देवत्व चले जाने से पुनः प्राण प्रतिष्ठा होनी चाहिये। दूसरे के व्यवहृत वस्त्र पहिन कर, नीला-काला वस्त्र पहिन कर, लाल वस्त्र पहिन कर भी भगवान् को छूना नहीं चाहिये। बिना घंटा ध्वनि किये बिना भी भगवान् को जगाना नहीं चाहिये। मद्य मांस भक्षी भी भगवान् को नहीं छूवे।

यस्तु मामन्धकारेषु बिना दीपेन सुन्दरि। वाराह पु. 135/8-9

श्मशानं यो नरो गत्वा अस्नात्वेव तु मां स्पृशेत्।

तेन क्लेशं समासाद्य क्लिश्यन्ते च नराधमः।। वाराह 136/8

मद्यं पीत्वा वरारोहे यस्तु मामुपसर्पति। तत्र दोषं प्रवक्ष्यामि-

वाराह-136/70

भेरी शब्दमकृत्वा तु यस्तु मां प्रबोधयेत्।

बधिरो जायते भूमे एकं जन्म न संशयः वाराह. 136/102

अध्यात्म जगत का मूलाधार पवित्रता है। बाह्य शुद्धि के बिना अभ्यन्तर शुद्धि की कल्पना मात्र दिवा स्वप्न है। शास्त्र कहते हैं "**सत्येन शौचेन तपसा**" देवता सत्य भाषण सदाचार, पवित्रता तथा तपस्या इन तीन गुणों पर प्रसन्न होते हैं। "**देवो भूत्वा देवान् यजेत्**" देव वत् शुद्ध होकर ही देवता की पूजा करनी चाहिये।

1. मल त्याग के पश्चात् शौचालय के सभी वस्त्र बिना धुले हुये पहिन कर पूजा नहीं की जा सकती। स्नान भी आवश्यक है। यदि पूर्ण स्नान नहीं तो कटि (कमर) पर्यन्त स्नान आवश्यक है। किन्तु वस्त्र पूरे धुले ही पहने जायेंगे। सिर में बंधा हुआ वस्त्र अपवित्र नहीं होता। हृदय के ऊपर तक धारण किया हुआ कोई सूत्र-माला ऊनी वस्त्र भी पहिन सकते हैं।

शौच क्रिया में मिट्टी का प्रयोग आवश्यक है। आजकल तो ग्रामीण जन भी साबुन का ही शौक करते हैं। फिर एक ही साबुन सौ लोगों को पवित्र करने की क्षमता रखती है। जब कि शास्त्रानुसार जिस मिट्टी से हाथ धोया गया, वह बची हुई मिट्टी पुनः प्रयोग नहीं की जा सकती। जब मिट्टी अवशिष्ट अपवित्र है तो साबुन की पवित्रता किस शास्त्र में है। उसका मुझे ज्ञान नहीं है। शिश्न तथा गुदा में भी मिट्टी का प्रयोग होना चाहिये। पुनः दश बार बायें हाथ में सात बार दोनों हाथों में मिट्टी का मर्दन होना चाहिये। (विष्णु पुराण) तब देवता बनकर देव पूजा करें। धुले वस्त्र धारण करें।

2. जब तक मल मूत्र का वेग नहीं है तभी तक व्यक्ति पवित्र है। मल मूत्र वेग आ जावे तो तुरन्त त्याग करके शुद्धि के पश्चात् देव स्पर्श तथा पूजा का अधिकारी हो सकता है, मल मूत्र के वेग लगने पर तुरन्त अपवित्र हो जायेगा।
3. मूत्र के पश्चात् मूत्रेन्द्रिय को जल से धोवे। हस्त शुद्धि करे पश्चात् पाँव धोकर 4 बार कुल्ला अवश्य करें। भोजन के पश्चात् 16बार, शौच क्रिया के पश्चात् 12 बार कुल्ला किये बिना भी व्यक्ति अपवित्र रहता है। अतः यह भी आवश्यक है। (विष्णु पुराण)
4. मल-मूत्र के पश्चात् तथा भोजन के पश्चात् जब तक व्यक्ति आचमन नहीं करता, तब तक वह अपवित्र है। आचमन-मार्जन आध्यात्मिक क्रिया है। यह प्रयोग भी देव स्पर्श करने वालों को आवश्यक है।
5. "कच्छ हीनो अधमाधमः" जब तक काँछ न लगावे तब तक दान-

पुण्य-प्रणाम-स्नान-दर्शन तक का फल प्राप्त नहीं होता। तब देव पूजा का लाभ कैसे प्राप्त होगा। देव पूजा के लिये धोती तथा ओढ़ने का वस्त्र आवश्यक है। वह नित्य उतारकर रख देवे। दूसरे दिन भी पूजा काल में धारण कर सकता है। स्त्रियों को भी सब कुछ ही पूजा करने का पुण्य है। पूजा काल में काला-नीला-लाल वस्त्र धारण न करें। ऊनी वस्त्र में रंग का दोष नहीं है। शीत के बिना अन्य ऋतु में सिर पर वस्त्र रखकर पूजा-जप-आरती-भोजन-पाठ-कथा श्रवण नहीं करें। स्त्रियों को यह नियम नहीं है। वे सभी अवस्था में सिर पर वस्त्र धारण कर सकती हैं। पूजा काल में ऊपर से पहिना जाने वाला वस्त्र तथा पैरों को उठाकर नीचे से पहिना जाने वाला वस्त्र दोनों ही अमान्य हैं। कुरता-पायजामा-पैण्ट-जाँघिया ये सभी ऊपर नीचे वाले वस्त्र है। पीछे से पहिने वाला वस्त्र पवित्र है। धोती-लंगोट-उपरना ये पीछे से ही पहिने जाते हैं। धोती-रुमाल-उपरना बिना किनारी वाला नहीं पहिने। (विष्णु पुराण) किनारी भी काली नीली नहीं होवे। मोजा पहिनकर पूजा-देवमंदिर का दर्शन तथा पुण्य कर्म वर्जित है। फिर मूर्ति स्पर्श तो निषेध है। बद्रीनाथ-केदारनाथ शीत प्रधान होने से वहाँ की व्यवस्थायें दूसरी हैं। उन पर विचार न किया जावे। आपत्तिकाले मर्यादा नास्ति। रोगी को बार-बार मलमूत्र के आवेग में ज्वर में, शीत रोग में बार-बार अत्यन्त शुद्धि तथा स्नान आवश्यक नहीं है। वह वस्त्र परिवर्तन तथा मार्जन से ही पवित्र माना जायेगा।

6. स्त्रियाँ चौथे दिन शुद्ध होकर पांचवे दिन ही देवपूजा के योग्य होती है।

किन्तु जिनको 10–15 दिन तक रक्त स्राव हो रहा है, ऐसी स्त्री को रक्त स्राव के पश्चात् स्नान से तुरन्त शुद्धि हो जाती है। (धर्म शास्त्र)

7. **यच्छिखया बिना कर्म बिना यज्ञोपवीतिकम्।।**
शिखा में ग्रंथि लगाये बिना तथा त्रैवर्णिको (ब्राह्मण–क्षत्रिय–वैश्य) को देवपूजा का अधिकार नहीं है। सौभाग्यवती स्त्री को बाल खोलकर तथा बालों का जूड़ा बांधकर देवपूजा में नहीं बैठना चाहिये। चोटी गूथ कर तथा पवित्र वस्त्रों से बैठना चाहिये। बिना पति वाली स्त्री खुले केश तथा जूड़ा बांधकर देव पूजा कर सकती है।

8. यज्ञोपवीत के बिना भी देवमूर्ति स्पर्श का दोष है। पवित्र यज्ञोपवीत हाथ से ग्रंथि दिया हुआ ही धारण करना चाहिये। बाजार का तथा रेशम का यज्ञोपवीत बाजारू गांठ वाला नहीं पहिनना चाहिये। ब्राह्मण क्षत्रियों को चाहिये कि वे कृपा करके यज्ञोपवीत में ग्रंथि लगाना सीखें तथा धारण करके उसकी पवित्रता का निर्वहन करें। यज्ञोपवीत को प्रत्येक अवस्था में धारण करना तथा पवित्र रखना स्वयं में देव पूजा है।
नित्योदकी नित्य यज्ञोपवीती नित्य स्वाध्यायी पतितान्नवर्जी अर्थात् देव पूजा–देव स्पर्श करने वाले को जल–शिखा–यज्ञोपवीत आदि क्रियाओं को करना आवश्यक है।

9. जिनकी शिखा झड़ गई है, उनको कुश की शिखा बनाकर लगानी चाहिये। संन्यासी को शिखा तथा सूत्र की आवश्यकता नहीं है। यज्ञोपवीत सूत का ही होना आवश्यक है। रेशम का नहीं। यज्ञोपवीत का सूत्र भी एक ही होना चाहिये, आजकल 3 खंडों में पृथक् पृथक् दे

रहे हैं वह अपवित्र है।

10. स्त्रियों को बिना यज्ञोपवीत के ही देव पूजा का अधिकार है। जब शास्त्र आज्ञा दे रहा है तो देवियों को अनावश्यक यज्ञोपवीत धारण की अनधिकार चेष्ठा नहीं करनी चाहिये।

11. माथे पर तिलक भी देव पूजा में आवश्यक है। भस्म ऊर्ध्वपुण्डू-त्रिपुण्ड्र कोई भी तिलक धारण करें, शास्त्रों में सभी तिलक की समान महिमा है। ये तिलक महान् है ये निम्न है। यह धारण कल्पित तथा अशास्त्रीय है। सभी तिलक श्रेष्ठ है। शास्त्र भेदभाव नहीं करते। भेदभाव आप-हम की अहं धारणाओं का परिणाम है। हमारे पास इस तथ्य को संपूर्ण साक्ष्य विद्यमान हैं। विद्वान समझ गये होंगे।

12. देवता की पूजा में, प्रणाम में, हवन में, जप, प्रदक्षिणा तथा दर्शन के समय गले में वस्त्र नहीं लपेटना चाहिये।

प्रदक्षिणे प्रणामे च पूजायां हवने जपे।
न कण्ठावृत वस्त्रः स्याद्दर्शने गुरुदेवयोः।।
(वाधूल स्मृति 139-40)

13. गले में माला की तरह जनेऊ डालने की परंपरा भी अनुचित है। वह ऋषि पूजा-तर्पण में विहित है। सभी काल में बांयें कंधे पर ही यज्ञोपवीत होना चाहिये। पितृ पूजा में दाहिने कंधे पर यज्ञोपवीत होवे।

14. देव प्रतिमा पूजन स्पर्श वालों को तमोगुणी द्रव्यों का भक्षण नहीं करना चाहिये। जैसे लहसुन-प्याज-भटा-मसूर-गाजर। देवो भूत्वा देवान् यजेत्।।

मूर्ति स्पर्श की हठधर्मिता –

हमको ऐसा लगता है कि मूर्ति का स्पर्श करें, छूकर प्रणाम करें, हम स्वयं तीर्थ मंदिरों में जाकर पूजा करें तभी यथार्थ पुण्य प्राप्त होगा। यह धारणा अनुचित है। मूर्ति के स्पर्श में पुण्य के स्थान पर प्रत्यवाय भी हो जाता है। देव मंदिरों में मूर्ति के स्पर्श में हठ न करें। क्योंकि हमारी पवित्रता-अपवित्रता कैसी है इस पर भी विचार करें। कहीं-कहीं पात्रता होने पर भी मंदिरों में मूर्ति स्पर्श पर निषेध है। यथा रामेश्वर मंदिर वहाँ तो कोई शंकराचार्य भी जल नहीं चढ़ा सकते। दक्षिण शंकराचार्य के अतिरिक्त। फिर भी आज तक किसी साधु-सन्यासी-ब्रह्मचारी, महात्माओं ने विरोध नहीं किया। जिन मंदिरों की जो परंपरा है उसका विरोध नहीं करना चाहिये। उसके अनुरूप रहना ही धर्म है। बैकुण्ठ प्रवेश पुजारी को ही विहित है बड़े बड़े मठाधीश भी मंदिरों में नित्य प्रवेश नहीं करते और कहीं जाने का हठ नहीं करते। यह हठ अज्ञानता है। अभी किसी महिला ने अवरोध तोड़कर मूर्ति स्पर्श किया उस पर विरोध भी हुआ। शासन ने उसकी प्रशंसा-पुरस्कार भी दिया। यह सभी अशास्त्रीय तथा अनुचित है। इस प्रकार की प्रक्रियाओं से कोई लाभ नहीं है। उसकी यथार्थता के धरातल पर विचार करना चाहिये। मर्यादायें सभी के लिये हैं। इससे शूद्र तथा ब्राह्मण का भेद नहीं है। सभी को यदि शास्त्रीय मान्यताओं के अनुसार मूर्ति दर्शन-स्पर्श करना है तो शास्त्राज्ञा के अनुसार ही करने में कल्याण है। शास्त्र के विरुद्ध करने में पाप है। देवताओं को स्वयं हाथ से लड्डू खिलाना। यह अनुचित कर्म है। उन तथ्यों को यथार्थ शास्त्र दृष्टि से समझने की आवश्यकता है। सभी हनुमानजी को अपने

हाथ से जल चढ़ावें, सभी मंदिरों में प्रवेश करें ऐसी धारणा उचित नहीं है। पूज्य धर्म सम्राट स्वामी करपात्रीजी ने भी काशी विश्वनाथ में प्रवेश-पूजा पर कुछ नियम बताये थे, किन्तु अज्ञान धर्मान्ध लोग स्वीकार कहाँ करते हैं। यह सब अनुचित तथा मनमानी है इसका परिणाम भी अनुचित है।

शिखा बंधन आवश्यक – बिना शिखा में ग्रंथि लगाये बिना पूजा पाठ की सिद्धि नहीं होती। तभी तो आज के व्यक्तियों को पुण्य–तीर्थ–सत्कर्म-यज्ञ–जप और देव पूजा का फल प्राप्त नहीं हो रहा। शिखा–सूत्र वेदाज्ञा है। किन्तु हमको लज्जा आती है कि चोटी बांधें तो कोई क्या कहेगा ? चाहे संपूर्ण क्रिया नष्ट हो जावे पर चोटी के चार बाल रखना कठिन है। लोक-परलोक की यातना स्वीकार है किन्तु शिखा धारण नहीं कर रहे हैं। शास्त्र स्पष्ट निर्देश कर रहे हैं–

''यच्छिखया बिना कर्म बिना यज्ञोपवीतिकम्''।।

स्त्रियों को भी खुले बाल रखकर नहीं अर्चन करना चाहिये। चोटी गूंथ कर ही सभी सत्कर्मों में प्रविष्ट होना ही आवश्यक है।

स्नाने दाने जपे होमे संध्यायां देवतार्चने।
शिखा ग्रंथि विना कर्म न कुर्याद्वै कदाचन्।। (आन्हिक सूत्रावली)

यजुर्वेद की माध्यन्दिनी शाखा में वर्णन आया कि दीर्घा गोखुर प्रमाण शिखा करनी चाहिये।

''यत्र वाणा सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव''

विशिखा विशिष्टा शिखा– (रामानंदाचार्य स्वामी श्रीराम भद्राचार्य)

आपस्तंब गृह्यसूत्र में लिखा है कि जो शिखा काट देते हैं उनके पुनः सभी संस्कार जातकर्म–नामकरण–मुण्डन–अन्नप्राशन–कर्ण वेध-

अक्षरारंभ यज्ञोपवीत आदि संस्कार करना चाहिये। विप्र-क्षत्रिय तथा वैश्यों को यही प्रमाण है।

शिखां छिन्दन्ति ये केचिद् वैराग्यात् वैरतोऽपि वा।
पुनः संस्कारमर्हन्ति त्रयो वर्णा द्विजातयः।।

यदि स्त्री तथा शूद्र अपनी शिखा काटते हैं तो उनको प्राजापत्य व्रत से शुद्धि होगी।

स्त्री शूद्रौतु शिखां छित्त्वा क्रोधात् वैराग्यतोऽपिवा।
प्राजापत्यं प्रकुर्यातां निष्कृतिर्नान्यथा भवेत्।। (आपस्तंब)

यज्ञोपवीत-तिलक-कंठी धारण आवश्यक -

भगवान की पूजा में तिलक तो आवश्यक है ही किन्तु द्विजातियों (तीनों वर्णों विप्र-क्षत्रिय-वैश्य) को यज्ञापवीत पवित्रता से धारण करना चाहिये। तथा तुलसी या रुद्राक्ष की कण्ठी माला का होना भी अत्यावश्यक है। **बिना भस्मत्रिपुण्ड्रेण बिना रुद्राक्षामालया।।** इसी प्रकार ऊर्ध्वपुण्ड्र तथा तुलसी माला धारण करने की भी नितांत आवश्यकता है। **देवो भूत्वा देवान् यजेत्।।** बिना तुलसी धारण किये बिना तो अन्न जल भी ग्रहण नहीं करना चाहिये। शास्त्रों में जो महत्त्व तुलसी का है वही महत्त्व रुद्राक्ष का भी है इसमें कोई भेद मानना शास्त्राज्ञा न होने का कारण है। उन्हीं व्यास जी ने तुलसी महिमा उन्हीं ने रुद्राक्ष माहात्म्य लिखा है। एतावता अभेद दृष्टि से धारण करना चाहिये। इसी प्रकार त्रिपुण्ड्र-ऊर्ध्वपुण्ड्र कोई भी धारण करें उससे कोई अन्तर नहीं पड़ता दोनों का फल एक समान ही है।

त्रिपुण्ड्रधारिणो ये च तेवै भागवतोत्तमाः।
रुद्राक्षालङ्कृता ये चतेवै भागवतोत्तमाः।। (नारद पुराण 5/68-69)

संकीर्ण मनोवृत्ति वाले लोग ही भेदभाव की धारणा बनाये रहते हैं। भागवत में ही लिखा है कि "**वैष्णवानां यथा शंभुः**" जब शिवजी परम वैष्णव हैं तो समस्त वैष्णव उनके शिष्य है। शिवजी दिन रात राम राम जपते हैं। "**मुखे यस्य हरेर्नाम**" (ना पु.) रामजी-विष्णुजी शिव पूजनरत् हैं। अतः भेद दृष्टि अज्ञान मूलक है।

स्त्रियों को तिलक कण्ठी-माला धारण करने की शास्त्राज्ञा है। किन्तु यज्ञोपवीत धारण करने की आवश्यकता नहीं है। जिन विशिष्ट बुद्धिमानों ने वेदों में स्त्री को यज्ञोपवीत धारण करने का प्रमाण दिया है उनका उत्तर खंडन हमने "**नारी धर्म विमर्श**" में किया है। उसको ध्यान से पढ़ें।

प्रतिमा विसर्जन –

यदि काष्ठ की मूर्ति हो तो भग्न जाने पर अग्नि में दग्ध करें। यदि पाषाण की प्रतिमा हो तो जल में विसर्जित करें।

अग्निना दारुजं दग्धं क्षिप्रं शैलादिकं जले (निर्णय पृ.527)

एतावता जगन्नाथादि दारु विग्रह द्वादश वर्ष पश्चात् अग्नि में दाह किया जाता है।

देवता की शोभायात्रा में स्पर्शास्पर्श दोष नहीं –

यदि किसी देवकार्य-यज्ञकार्य की शोभा यात्रा, महोत्सव यात्रा, विवाह, युद्ध, बाढ़ और वन आदि स्थानों में स्पर्श दोष नहीं होता।

देवयात्रा विवाहेषु यज्ञप्रकरणेषु च।
उत्सवेषु च सर्वेषु स्पृष्टास्पृष्टिर्न विद्यते।। (अत्रि सं. 240)

पाठ विधि –

वेद-पुराण-रामायण-गीता आदि किसी भी ग्रंथ के पाठ करने से

महान् पुण्य की प्राप्ति होती है। किन्तु उच्च कोटि का पाठ वह है जिसमें जिस पाठ को किया जा रहा है उसका अर्थानुसन्धान (अर्थ का भी) ज्ञान हो। यदि अर्थ ज्ञान के साथ पाठ हो तो उसका अत्यधिक पुण्य प्राप्त होता है। बिना अर्थ समझे भी करने से पुण्य की प्राप्ति तो होती है, मंगल भी होता है क्योंकि वह आर्ष वाणी है। पाठ जहाँ होता है वहाँ का वातावरण पवित्र होता है। तथा जहाँ जिस प्रकार का पाठ होगा वहाँ उसी प्रकार के परमाणुओं का भी निर्माण होता है। असद्-वार्ता-मिथ्या भाषण-अधर्म चर्चा होती है वहाँ वैसे परमाणु बन जाते हैं। किसी वैज्ञानिक ने प्रयोग किया था, जिस देवता की स्तुति होती थी बालू में उन्हीं देवता का चित्र उभर जाता था। अत: पाठ का अत्यन्त महत्त्व है। शास्त्र तो कहते हैं अर्चा से भी पाठ का महत्त्व अधिक है।

वेद पाठ - वेद पाठ संस्कारी वैदिक ब्राह्मणों को ही करना चाहिये, क्योंकि वेद के स्वर-प्रकृति-विकृति-पाठ आदि का ज्ञान उचित होना आवश्यक है। यदि वेद मंत्र थोड़ा भी अशुद्ध हो जावे तो उससे लाभ के स्थान पर हानि की संभावना भी रहती है। वेद में शब्दाग्रह है। भक्ति में भावगत उतना आग्रह नहीं वह भाव प्रधान होता है। वेद शब्द अशुद्धि से इन्द्र की पराजय हो गई थी।

दुष्ट: शब्द: स्वरतो वर्णतो वा मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति यथेन्द्र शत्रुः स्वरतोऽपराधात।।
(महाभास्य)

अत: वेदपाठ तथा वेद मंत्रों के जप के सिद्धान्त भी पृथक् पृथक् है।

गायत्री मंत्रोच्चारण तो निषिद्ध है किन्तु आजकल तो गायत्री मंत्र बाजारू हो गया है। ध्वनि यंत्रों में, दूरभाष में, माइकों में उच्चारण होता ही रहता है। प्रायशः दूरदर्शन में होने वाले वेद पाठ केसिटों के वेदपाठ अशुद्ध ही रहते हैं। क्यों कि गायकों को वेदपाठ का ज्ञान तो रहता नहीं है। उनको तो स्वर लहरी में उतारना होता है। अतः उनका अनुकरण नहीं करना चाहिये। वेद मंत्र जैसे लिखे हैं वैसा उच्चारण भी उनका नहीं है। अतः वेद मंत्र गुरु मुख से उच्चारित होने पर ही उनको ग्रहण करना चाहिये। ग्रंथ से वेद मंत्र पढ़ने वाले लोगों का वेद पाठ अशुद्ध होता है उच्चारण को लिपिबद्ध किया ही नहीं गया। वह श्रवण करके ही प्रयुक्त होता है। तभी वेदों का नाम श्रुति है।

वेद पाठ के प्रकार– वेदों के पाठ के 2 प्रकार हैं प्रकृति पाठ तथा विकृति पाठ।

प्रकृति पाठ – प्रकृति पाठ वह है जिसमें वेद मंत्रों को जैसा का तैसा कंठस्थ किया जाता है।

विकृति पाठ – विकृति पाठ का अर्थ है कि पदों को तोड़ तोड़कर आगे पीछे करते हुये। पुनः पुनः शब्दावृत्ति दोहरा कर पाठ किया जाता है।

वेदपाठ के तेरह प्रकार – संहिता पाठ, पद पाठ, क्रम पाठ, जटा पाठ, पुष्प माला पाठ, क्रममाला पाठ, शिखा पाठ, रेखा पाठ, दण्ड पाठ, रठा पाठ, ध्वज पाठ, घन पाठ और त्रिपद्घन पाठ। इन पाठों का विस्तार विकृतिवल्ली नामक ग्रंथ में विस्तार से देखा जा सकता है।

वेद का अनधिकार : सूत्र व्याख्या में भगवत् पाद शंकराचार्यजी ने "**स्त्री शूद्रौनासधीयतामित्ति श्रुतेश्च**" स्त्री शूद्रादि-आचारहीन-आलसी-सांकर्ययुक्त-को वेद पढ़ने का निषेध किया है। भागवतकार भी "**स्त्री शूद्र द्विजबन्धूनां त्रयी न श्रुति गोचरा**" कहकर निषेध ही कर रहे हैं। पुराणों में शंकर भगवान् भी पार्वती से कह रहे हैं-

प्रणवस्याधिकारो नैव तवास्ति वर वर्णिनि।

नमो भगवते वासुदेवाय इति जप सर्वदा।।

अत: व्यासजी के वेद पुराण आदेशानुसार-स्त्री-शूद्र तथा अयोग्यों अनाचारियों को वेद वर्जित किया गया है। इसी परंपरा में रामानंदाचार्य, रामानुजाचार्य, वल्लभाचार्य मध्वाचार्य, निंवार्काचार्य आदि सभी ने मना किया है। किन्तु मनुष्य का एक स्वभाव है कि जहाँ निषेध होगा वहाँ अवश्य जायेगा, फिर कलियुग की तो इस विषय में महिमा ही अनन्त है।

प्राय: स्त्री तथा जिनको भी वेदज्ञान नहीं उनके द्वारा महामृत्युंजय मंत्र जप-गायत्री जप से लाभ के स्थान पर हानि ही प्राप्त हो रही है। अत: 34 पूर्वाग्रह को त्याग कर अधिकारी व्यक्तियों को गुरु चरणों में मंत्रानुसन्धान करना चाहिये। तभी लाभ की प्राप्ति होती है।

प्राय: संप्रति महामृत्युंजय मंत्र जप की नर-नारी एक परंपरा सी बना रहे है। किन्तु उनको यह ज्ञान नहीं कि उसका उच्चारण तो सही होना चाहिये। "**त्र्यम्बकं**" को व्याकरण की दृष्टि से '**त्रियम्बकम्**' करना होगा। स्वर भक्ति द्वारा अर्द्ध स्वर 'य' के प्रतिबिम्ब से 'इ' स्वर का विभाग हो जाता है '**त्र्यम्बकं यजामहे**' में सात स्वर ही हैं जब कि होना

चाहिये आठ स्वर अत: स्वर भक्ति से आठ स्वर बनते हैं।

इसी प्रकार गायत्री मंत्र में '**वरेण्यम्**' के स्थान पर जप काल में '**वरेणयम्**' जप होना चाहिये।

पाठकाले वरेण्यम् स्यात् जप काले वरेणियम्।

वरेण्यमिति यो ब्रूयात् स नरो ब्रह्म घातक:।। (पद्म पुराण)

पिंगल मुनि के पिंगल सूत्र में भी यही बताया है।

"यत्र छन्दसि संख्या पूर्तिर्न भवति तत्र यकारश्चे त्तर्हि 'इयादि पूरण:' इति सूत्रेण 'इय' इतीकार सहित यकारेण पूर्ति: कार्या। यत्र वकारस्तत्र 'उव' इत्युकार सहित वकोरण पूर्ति: कार्या अनेन प्रमाणेन वरेण्यमित्यस्य स्थाने 'वरेणियम्' इति पाठाच्चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री सिध्यति।

अत: वेद पाठ के मिथ्यानुकरण से बचना चाहिये।

पुराण-स्तोत्रपाठ- पुराण तथा स्तोत्र पाठ निरापद है। उसका पाठ स्त्री भी कर सकती हैं। कोई भी स्तोत्र रामायण का पाठ हो उसको भी अर्थ समझते हुये करने से भावना निर्मित होती हैं। अक्षरों का उच्चारण स्पष्ट होना चाहिये। पदों का विभाग, उत्तम स्वर, धैर्य, एक ही गति समय में बोलना चाहिये।

माधुर्यमक्षरव्यक्ति: पदच्छेदस्तु सुस्वर:।

धैर्यं लय समर्थं च षडेते पाठका गुणा:।।

ये छै लक्षण युक्त पाठ ही सही पाठ कहलाता है। पाठ करने में रागों के साथ गाना-उच्चारण में समयाभाव से शीघ्रता करना, पाठ करते समय

सिर-शरीर हिलाते रहना या दोष है। अपने हाथ के लिखे हुये स्तोत्र-ग्रंथ का पाठ नहीं करना चाहिये। किसी अन्य से लिखाकर पाठ करने की शास्त्र की आज्ञा है। पाठ करने में अर्थज्ञान नहीं होने से प्रायः पूरा भाव नहीं बनता। अतः अर्थानुसंधान आवश्यक है।

गीती शीघ्री शिरःकंपी तथा लिखित पाठकः।
अनर्थोऽल्पकण्ठश्च षडेते पाठकाधमाः।।

पाठ करने वाले बड़े ग्रंथ को आसन-पीढ़ा-पीठ पर विराज कर पाठ करना चाहिये। हाथ में ग्रंथ रखकर पाठ से उसका संपूर्ण फल प्राप्त नहीं होता। स्तोत्रादि का पाठ मानसिक नहीं होना चाहिये। वाणी स्पष्ट स्फुरित होनी चाहिये तभी उसका संपूर्ण फल प्राप्त होता है।

अज्ञानात्स्थापिते हस्ते पाठे ह्यर्धफलं ध्रुवम्।
न मानसे पठेत्स्तोत्रं वाचिकं तु प्रशस्यते।।

बहुत उच्च स्वर से तथा शीघ्रता से पाठ नहीं करें। अस्थिर चित्त होकर भी पाठ करने से पूरा फल प्राप्त नहीं होता। शब्द शुद्धि का भी ध्यान रखना चाहिये।

उच्चैः पाठं निषिद्धं स्यात्त्वरां च परिवर्जयेत्।
शुद्धेनाचलचित्तेन पठितव्यं प्रयत्नता।।

यदि छोटे स्तोत्रादि हों तो उनको बिना पुस्तक के कण्ठस्थ करके भी पढ़ा जा सकता है।

संप्रति पुराण पाठ की तो परंपरा ही समाप्त हो जा रही है। नाचना-गाना-बजाना-मनोरंजन ही मात्र पुराण की मूल परिभाषा रह गई है।

किन्तु यह अविहित है पुराण पाठ है। पुराण पाठक भी प्रायः अनुच्चरित दृष्टि पाठ से ही पूर्णता करते हैं यह सर्वथा अविहित तथा आत्मवंचना मात्र है।

अतः शास्त्र विधि का पालन नहीं करने से पाठ का संपूर्ण फल प्राप्त नहीं होता। भगवान् का वचन है।

यः शास्त्र विधि मृत्सृज्य वर्तते कामकारतः।।(गीता)

सिद्धि तथा परलोक शांति के लिये विधिपूर्वक पाठ होना चाहिये।

रामायण मानसजी का पाठ भी करने वाले इतनी शीघ्रता में करते हैं कि उनकी समझ में नहीं आता श्रोता या देवता की समझ में क्या आयेगा। अतः शांत चित्त-समर्पित मनोयोग से पाठ करने में पूर्ण लाभ की प्राप्ति होती है।

❋❋❋

डॉ. श्री रामाधार जी उपाध्याय

विद्यावाचस्पति

(एम.ए., पी.एच.डी. संस्कृत)

अन्य प्रकाशित ग्रन्थ

- हनुमच्चरित का क्रमिक विकास (शोधग्रंथ)
- मुण्डन दाह अशौच निर्णय
- व्यास पीठ की आचार संहिता
- वेद-पुराण शास्त्र परिचय
- रामायण के कतिपय समाधान
- एकादशी व्रत निर्णय एवं महात्म्य
- भक्ष्याभक्ष्य निर्णय
- नारी का धर्म एवं स्वरूप विमर्श
- षोडश संस्कार
- लील्यो ताहि मधुर फल जानू
- वैदिक गो महत्व मीमांसा
- ब्राह्मण परिचय तथा ब्राह्मण गोत्र मीमांसा

प्रकाशनार्थ

- भक्तिमती भीलनी
- सदाचार निर्णय
- प्रायश्चित निर्णय
- वेदों में मूर्ति पूजा

प्राप्ति स्थल :

प्रेमनारायण (ब्रह्मचारी)

17, रामायणम् "श्रीराम कुंज", श्रीराम कॉलोनी

होशंगाबाद रोड, भोपाल (म.प्र.) मो : 09009216664, 08718044308

श्री हनुमान निकेतन आश्रम, बीकलपुर (रायसेन) मध्यप्रदेश

मो.: 09826787902, 09754269821